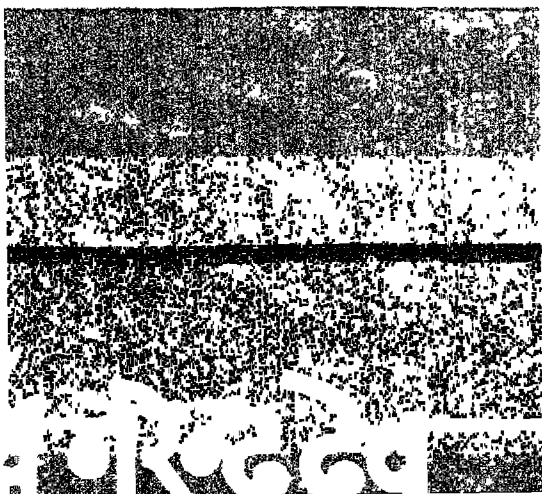


आचार्य नरेन्द्र देव



लेखक

जगदीश चन्द्र दीक्षित

सभापति, उ० प्र० विधान परिषद्

सूचना एवं जन-सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश का प्रकाशन

आचार्य नरेन्द्र देव शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित

प्रथम संस्करण

सितम्बर, 89

प्रकाशक :

अशोक प्रियदर्शी

निदेशक, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ० प्र०

मुद्रक

रोहिताश्व प्रिंटर्स

268, ऐशबाग रोड, लखनऊ – 226004

फोन : 43973





मुख्य मंत्री
उत्तर प्रदेश



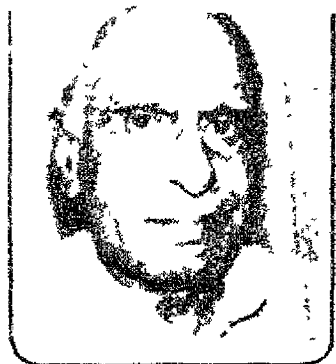
दो शब्द

भारतीय राजनीति के जिस शिखर पुरुष ने सत्ता के आकर्षण मे बधने से साफ इंकार कर दिया था, उनका नाम था आचार्य नरेन्द्र देव। उपेक्षितों की पीड़ा और शोषित वर्ग की व्यथा को समझने वाले, महात्मा गौतम बुद्ध और कार्ल मार्क्स के विचारों से पूरी तरह प्रभावित आचार्य जी को बाबू श्रीप्रकाश के माध्यम से गांधी जी से मिलने का सुयोग प्राप्त हुआ था। पहली ही भेट मे उन्होंने गांधी जी को इतना प्रभावित किया कि वह बोल पड़े "श्रीप्रकाश, इस हीरे को तुमने अब तक मुझसे छिपाये क्यों रखा?"

वस्तुतः आचार्य जी जैसे बिरले ही नेता होगे जो भविष्य के गर्भ मे इतनी दूर तक झाकने की क्षमता रखते हो। भारतीय राजनीति, समाज व्यवस्था, बदलते हुए परिवेश तथा नये युग की चुनौतियों के बारे मे उन्होने जो कुछ कहा था, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है। आचार्य जी मूलतः एक शिक्षाविद्, एक अनुसंधाता, एक विचारक और एक सुधी लेखक थे। वह राजनीति को सत्ता का नही, सामाजिक परिवर्तन का साधन समझते थे। वह पक्के सिद्धान्तवादी थे और सिद्धान्तों से हटना उन्हे किसी भी कीमत पर स्वीकार न था।

आचार्य जी का यह शताब्दी वर्ष है। बड़ी प्रसन्नता की बात है कि सूचना विभाग अनुभवी एवं अध्ययनशील लेखक-सम्पादक श्री जगदीश चन्द्र दीक्षित लिखित यह पुस्तक प्रकाशित करने जा रहा है। यह पुस्तक हमारे सुधी पाठको को उस महान विचारक और समर्पित देशसेवी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से भलीभांति परिचित करायेगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

– नारायण दत्त तिवारी
मुख्यमंत्री
उत्तर प्रदेश



लेखकीय

आचार्य नरेन्द्र देव के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के चित्रण के लिए जैसा शब्द शिल्प जैसा वाक्-कौशल, जैसी तूलिका तथा जैसा स्थान चाहिए, वह दुर्लभ है। भारतीय राजनीति के उत्थान में नरेन्द्र देव जी ऐसे वट-वृक्ष के रूप में प्रकट हुए, जिसकी छाया की शरण राष्ट्रीय राजनीति समय-समय पर लेती रही। उनका राजदर्शन मूलत: गांधीवादी तथा मार्क्सवादी वैचारिक तत्वों की समन्वयात्मक क्रिया तथा प्रक्रिया का परिणाम था। तिलकवादी राष्ट्रीयता के साँचे में ढला उनका महिमामय व्यक्तित्व कई दशकों से हिमगिरि के उन्नत प्रांगण में, जिसमें भारतीय उप महाद्वीप स्थित है, अपना आलोक बिखेरता रहा है।

''वन्दे मातरम्'' की अमरवाणी आचार्य नरेन्द्र देव को अपने जीवन के बाल्यकाल में सर्वप्रथम 10 वर्ष की आयु में सुनाई पड़ी थी जिसने उनके अन्तर्मन में राष्ट्रीय चेतना का बीजारोपण किया। पं. महामना मदन मोहन मालवीय से उनके पिता के पारिवारिक सम्बन्ध थे अतएव उनका आशीर्वाद नरेन्द्र देव को पहले ही मिल चुका था। अपनी छात्रावस्था में नरेन्द्र देव 1905 तथा 1906 के कांग्रेस अधिवेशनों में सम्मिलित हुए थे, जहाँ वे एकाग्र दृष्टि से लोकमान्य तिलक को देखते रहे। सात जनवरी 1907 को प्रयाग में उन्हें लोकमान्य तिलक को अत्यन्त निकट से देखने का अवसर मिला। उस दिन वह तिलक के मेजबानों में से एक थे। इस प्रकार लोकमान्य तिलक ने उनके अन्तर्मन में राष्ट्रीय चेतना विकसित की और मालवीय जी के प्रभाव ने उनकी अभिरुचि को भारतीय संस्कृति की ओर मोड़ा।

बहुचर्चित सूरत अधिवेशन (1907) में कांग्रेस दो खण्डों में विभाजित हो गयी। इसमें से एक खण्ड 'गरम दल' के नाम से प्रसिद्ध कांग्रेस जनों के उस वर्ग

का था जो लोकमान्य तिलक तथा उनके साथियों–लाला लाजपत राय तथा अरविन्द घोष आदि–की विचारधारा के समर्थक थे। उदारपंथी दल (नरम दल) के लोगो ने गोपाल कृष्ण गोखले को अपना नेता माना। तत्कालीन संयुक्त प्रान्त की नेतृ–मण्डली लोकमान्य तिलक के साथ न होकर गोखलेवादियो के साथ रही। तथापि नवयुवको का समुदाय तिलक का भक्त हो गया और नरेन्द्र देव उनमे से एक थे।

छात्र जीवन मे उन्हें 'वदे मातरम्', 'ललकार' तथा 'इंडियन सोशियालाजिस्ट' आदि क्रातिकारी पत्रिकाए पढने का अवसर मिला। दादा भाई नौरोजी लिखित 'पावर्टी एण्ड ब्रिटिश रूल इन इंडिया' तथा रमेश चन्द्र दत्त लिखित ''भारत का आर्थिक इतिहास'' के अध्ययन से उन्हें भारत की व्यथा और विपन्नता के मूलभूत कारणो को समझने का अवसर मिला।

भारतीय सस्कृति, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व तथा बौद्ध दर्शन के महापडित आचार्य नरेन्द्र देव ने मार्क्सवादी साहित्य का गहरा अध्ययन किया। रूसी क्राति तथा लेनिन के विचारो ने भी उन्हे प्रभावित किया था। किसान आदोलन मे भाग लेते हुए वह प. जवाहर लाल नेहरू के सम्पर्क मे आये और काशी विद्यापीठ ने उनका परिचय महात्मा गाधी से कराया। जवाहर लाल जी से नरेन्द्र देव जी के विचार बहुत मिलते-जुलते थे और दोनो एक दूसरे से बहुत प्रभावित थे। मार्क्सवादी विचारधारा में रचे-बसे आचार्य जी जब बाबू श्रीप्रकाश जी के माध्यम से गाधी जी से मिले तो उनके जीवन के एक नये अध्याय का श्रीगणेश हुआ। वे गाधी जी से प्रभावित ही नही हुए बल्कि भलीभाति उन्हे भी प्रभावित किया। इसके बाद भारतीय सस्कृति एव परिवेश के अनुसार मार्क्सवाद और गांधीवाद का अनूठा समन्वय कर लेने के नाते आचार्य जी गाधीवादियों के बीच मार्क्सवादी तथा मार्क्सवादियो के बीच गाधीवादी के रूप मे पहचाने जाने लगे।

सक्रिय राजनीति मे आ जाने के बाद भी उन्होने अध्ययन-अध्यापन से मुह नही मोडा। अपने जीवन की दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियो -अध्ययन लेखन तथा राजनीति–की चर्चा करते हुए उन्होंने विद्यापीठ मे बीते हुए दिनो को जीवन का श्रेष्ठतम हिस्सा कहा है क्योंकि वहा उन्हें इन दोनो के लिए समान अवसर मिला। विभिन्न राष्ट्रीय आंदोलनो में भाग लेकर 1930, 1931, 1932, 1941 तथा 1942 मे जेल गये।

आचार्य जी राजनीति में रहते हुए भी अनासक्त कर्मयोगी थे। उन्होंने संयुक्त प्रान्त विधान सभा के 1937 के चुनाव मे काग्रेस को विजयश्री और बहुमत दिलाया लेकिन जब प्रीमियर बनने की घडी आई तब उन्होने यह गौरव पं. गोविन्द बल्लभ पत को दे दिया।

आचार्य जी मूल्यों पर आधारित राजनीति के पक्षधर थे तथा जनतात्रिक व्यवस्था के

द्वारा समाजवादी समाज का निर्माण उनका लक्ष्य था। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वह निरन्तर संघर्ष और साधना करते रहे। स्वाधीनता मिल जाने पर कांग्रेस समाजवादी दल के कुछ लोगों ने कांग्रेस से अलग होने की सलाह दी लेकिन आचार्य जी ने कांग्रेस में ही बने रहने पर जोर दिया। परन्तु महात्मा गांधी की मृत्यु के बाद स्थिति में परिवर्तन आया और आचार्य जी ने महसूस किया कि लोकतंत्र की सफलता के लिए सबल विरोधी दल का होना बहुत आवश्यक है। इसलिए अपने सहयोगियों सहित उन्होंने 'संतप्त हृदय से अपना पुराना घर' अर्थात् कांग्रेस छोड़ने और साथ ही विधान सभा से त्यागपत्र देने का निर्णय लिया। पार्टी छोड़ने पर भी वे चाहते तो विधान सभा में चुपचाप इधर से उधर जा बैठते लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया क्योंकि यह उनके राजनैतिक आदर्शों के विपरीत होता।

भारत में समाजवादी आन्दोलन के प्रवर्तक आचार्य जी का कहना था कि उदात्त आदर्शवाद ही इतिहास बनाया करता है प्रशासकों का कुशल प्रशासन नहीं। उनके लिए समाजवाद एक नयी संस्कृति की स्थापना का प्रयास था, जिसमें मार्गदर्शन का कार्य इतिहास को करना था। उनके मत से क्रांतियों को इतिहास का इंजन ही आगे खींचता चलता है। पूंजीवादी व्यवस्था का सबसे बड़ा दोष यह था कि उसमें श्रम के सम्मान के लिए कोई स्थान न था। पूंजीवाद का यह दावा भी उनको स्वीकार न था कि आर्थिक नियम अपने आप कार्य करते हैं और उन्हें कोई रोक नहीं सकता। आचार्य जी का कहना था कि आर्थिक नियम तो समाज में होने वाले परिवर्तनों के प्रतीक मात्र हुआ करते हैं। अतएव जैसे-जैसे समाज का स्वरूप बदलता है वैसे-वैसे नियम भी बदलते जाते हैं। प्रोफेसर हैराल्ड लास्की के इस कथन में आचार्य जी को गहरा विश्वास था कि कोई भी मानव समाज अपनी स्वतन्त्रता नहीं बनाये रख सकता, यदि वह अपनी जीवन-पद्धति को बदलने के लिए तैयार नहीं है। आचार्य जी मार्क्स के इस मत से सहमत थे कि समाज के निर्माण में मानव और पदार्थ दोनों बराबर महत्व रखते हैं। उनके अनुसार उन दिनों कम्युनिस्ट पार्टी के लोग वर्गवाद (पदार्थवाद) को मानववाद से अधिक महत्व दिया करते थे जो उचित न था।

समाजवादी क्रांति के सम्बन्ध में आचार्य नरेन्द्र देव का अपना मौलिक चिन्तन था जो गौतम बुद्ध तथा महात्मा गांधी के जीवन दर्शन से प्रभावित था। नैतिक मूल्यों के अनुसरण के गांधी जी के आदर्श को उन्होंने अपने जीवन में उतारा था। यूरोप में जन्मी नगरांचलीय संस्कृति के मुकाबले ग्रामांचल में जन्मी बौद्ध संस्कृति के उपासक होने के कारण आचार्य जी को क्रांति के लिए मजदूरों के ही समान किसानों की शक्ति में भी विश्वास था। कम्युनिस्ट पार्टी के लोग कहते थे कि "किसान प्रतिक्रियावादी होता है और वह क्रांति नहीं कर सकता। किन्तु किसानों द्वारा समाजवादी क्रान्ति लाकर चीन ने उपर्युक्त धारणा को गलत सिद्ध कर दिया। अतएव, बौद्ध दर्शन तथा मार्क्सवादी दर्शन से प्रभावित नरेन्द्र जी ने यह निष्कर्ष निकाला कि किसान भी क्रांतिकारी लोग हैं और वे भी क्रान्ति करने में सक्षम हैं।

शिक्षा के क्षेत्र मे आचार्य नरेन्द्र देव का योगदान कम न था। काशी विद्यापीठ मे लगभग 15 वर्ष तक अध्ययन कार्य करने के बाद वह उसके आचार्य रहे। विद्यापीठ के अतिरिक्त लखनऊ विश्वविद्यालय तथा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति के पद को भी उन्होंने सुशोभित किया था। 1938 मे उत्तर प्रदेश सरकार ने आचार्य जी की अध्यक्षता मे एक समिति नियुक्त की थी जिसका उद्देश्य प्रदेश की प्रारम्भिक तथा माध्यमिक शिक्षा प्रणालियो मे सुधार के सम्बन्ध मे संस्तुति देना था। यह समिति नरेन्द्र देव समिति के नाम से प्रसिद्ध है। समिति ने सबसे बडा काम यह किया था कि सरकारी सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थानो को सहायता प्राप्त करने के लिए अध्यापको के इकरार-नामे को आवश्यक शर्त बनाकर अध्यापको को अकारण नौकरी जाने के भय से मुक्त किया था। इस प्रकार आचार्य जी ने अध्यापकों की नौकरियो को सुरक्षित करने की व्यवस्था की थी।

शिक्षा के दार्शनिक पक्ष मे भी आचार्य जी ने महत्वपूर्ण योगदान किया। गांधी जी के शिल्प-वृत्ति आधारित शिक्षण के दर्शन को स्वीकार करते हुए नरेन्द्र देव समिति ने कला और सामाजिक विज्ञान विषयो को भी समान रूप से महत्व दिया। आचार्य जी ने देखा कि स्वतन्त्रता के बाद भारत एक सांस्कृतिक संकट के बीच से गुजर रहा है इसलिए उन्होने शिक्षा के द्वारा सांस्कृतिक मूल्यो की प्रतिष्ठापना पर बल दिया। पत्रकारो की जीविका को सुरक्षा प्रदान करने के लिए भारत सरकार ने जो 'वेज बोर्ड' नियुक्त किया था, आचार्य नरेन्द्र देव भी उसके सदस्य थे। इस रूप मे पत्रकारो को मालिको के शोषण से मुक्त करने तथा सेवा-सुरक्षा प्रदान करने के लिए आचार्य जी ने जो योगदान किया उसके लिए पत्रकार समुदाय उनका ऋणी है।

31 अक्टूबर, 1889 को प्रारम्भ होकर एक फरवरी, 1956 को समाप्त होने वाली महामानव आचार्य जी की संक्षिप्त जीवन-गाथा इस लघु रचना मे प्रस्तुत है। इस रचना की सर्जना में जो भी सौष्ठव है, चाहे वह मुद्रण का हो चाहे वाग्मय का, इसका श्रेय सूचना निदेशक श्री अशोक प्रियदर्शी तथा उनके रचनाधर्मी सहयोगी श्री राजेश शर्मा तथा डॉ. राधेश्याम उपाध्याय को जाता है। प. रामऋषि शुक्ल के सुविचारित परामर्श तथा श्री रामशंकर सिंह के परिश्रम ने इस रचनाकर्म मे जो उल्लेखनीय भूमिका निभायी उसके लिए मै उनका आभारी हूँ। मै अपने को परम धन्य समझूँगा यदि मुझ ऐसे अकिंचन का यह प्रयास आचार्य नरेन्द्र देव के शताब्दी वर्ष मे लोगो को उनके जीवन और दर्शन का अध्ययन-अनुशीलन करने के लिए प्रेरित कर सके।

– जगदीश चन्द्र दीक्षित
सभापति
उत्तर प्रदेश विधान परिषद

अनुक्रमणिका

क्रम सं	विवरण	पृष्ठ स
1	पारिवारिक पृष्ठभूमि	1
2	जीवन के आरम्भिक दिन	6
3	लोकमान्य तिलक का प्रभाव	10
4	अध्ययन और अभिरुचि	16
5	काशी विद्यापीठ और आचार्य–पद	18
6	राष्ट्रीय आन्दोलन के विविध आयाम	23
7	कांग्रेस समाजवादी पार्टी की स्थापना	31
8	लखनऊ कांग्रेस और नरेन्द्र देव	35
9	कांग्रेस के नेतृत्व में वर्चस्व	38
10	गाधी जी से निकट सम्पर्क और अगस्त क्रान्ति	40
11	वैचारिक पक्षधरता और दूरदृष्टि	44
12	चिन्तन और विचार	48
13	प्रजा समाजवादी पार्टी का जन्म	54
14	जीवन का अंतिम अध्याय	58
15	आचार्य जी और गाधी जी	63
16	आचार्य जी और पं नेहरू	66
17	आचार्य जी और किसान आन्दोलन	69
18	शिक्षाविद् आचार्य जी	72
19	साहित्य साधना	75
20	सांस्कृतिक द्रष्टि	78
21	परिशिष्ट	83

पारिवारिक पृष्ठभूमि

नैमिषारण्य (सीतापुर) क्षेत्र सदा से युगान्तरकारी विभूतियों को जन्म देता रहा है। मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाने वाले राम को गहन तपस्या के फलस्वरूप मनु और शतरूपा ने पाया नैमिषारण्य में ही था, दशरथ-कौशल्या के रूप में देखा-दुलराया भले ही अयोध्या में। कुछ ऐसा ही सुखद सयोग मार्क्सवादियों के बीच में गांधीवादी और गांधीवादियों के बीच मार्क्सवादी माने जाने वाले युग पुरुष नरेन्द्र देव के बारे में भी रहा। उनका नाम आते ही जनमानस में फैजाबाद का बिम्ब उभरता है जबकि वह पैदा हुए थे सीतापुर में। यही नहीं सयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) में कांग्रेस के संस्थापक बाबू गगा प्रसाद वर्मा भी सीतापुर की इसी पुण्यभूमि में पैदा हुए थे। सुदामा की दैन्यकथा कहने वाले महाकवि नरोत्तम दास भी यहाँ रहे थे।

इसे भी एक सयोग ही कहना चाहिए कि स्वय आचार्य जी की लेखनी से जाने अनजाने एक ऐसी पंक्ति निकल पड़ी जो एक पहेली बन गयी है। आचार्य जी की लेखनी लिखती है- "हम लोगों का पैतृक घर फैजाबाद में है---------हमारे खानदान में सबसे पहले अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने वाले मेरे दादा के छोटे भाई थे। --------- मेरे बाबा का नाम बाबू सोहन लाल था। वह पुराने केनिंग कालेज में अध्यापक का काम करते थे। उन्होंने मेरे पिता और मेरे ताऊ को अंग्रेजी की शिक्षा दी। पिता जी ने केनिंग कालेज से एफ.ए. कर वकालत की परीक्षा पास की। आंखों की बीमारी के कारण वह बी.ए पास न कर सके। मेरे बाबा उनको कानून की पुस्तकें सुनाया करते थे और सुन-सुन कर ही उन्होंने परीक्षा की तैयारी की। वकालत पास करने पर मेरे बाबा के शिष्य मुरली धर के साथ वकालत करने लगे। दोनों सगे भाई की तरह रहते थे।"

आचार्य नरेन्द्र देव की उपर्युक्त अभिव्यक्ति का आशय यह है कि उनके बाबा के छोटे भाई उनके खानदान में पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने अंग्रेजी की शिक्षा पायी थी। अंग्रेजी की शिक्षा के सन्दर्भ में वह न अपने बाबा का ही उल्लेख करते हैं और न ही वह यही कहते हैं कि अंग्रेजी पढ़ने वाले व्यक्तियों में उनके कुटुम्ब में उनके दादा के छोटे भाई के अतिरिक्त कोई और भी था। उपर्युक्त आत्मकथात्मक

मीमांसा के अनुसार आचार्य नरेन्द्र के दादा के छोटे भाई ने जो पुराने केनिंग कालेज के अध्यापक हुआ करते थे, आचार्य जी के चाचा जी को तथा पिता जी को अंग्रेजी की शिक्षा दी थी। वे ही बल्देव प्रसाद जी को, दृष्टि कमजोर होने के कारण कानून की पुस्तकें पढ़ कर सुनाया करते थे। सीतापुर के वकील मुंशी मुरली धर आचार्य जी के दादा के छोटे भाई के शिष्य थे। आचार्य जी के बाबा के यह छोटे भाई कौन थे? बाबू सोहन लाल या कोई और? उनके कुटुम्ब में अंग्रेजी सीखने वाला पहला व्यक्ति कौन था? बाबू सोहन लाल या कोई और? उनके कुटुम्ब में सबसे पहले अंग्रेजी सीखने वाले उनके दादा के छोटे भाई कौन थे? बाबू सोहन लाल या कोई और। आचार्य जी के पितामह कौन थे? डा. वी.वी.केसकर तथा वी.के.एन.मेनन द्वारा आचार्य नरेन्द्र देव जी को मृत्योपरान्त भारत सरकार के बुक ट्रस्ट से प्रकाशित स्मृति-ग्रंथ 'आचार्य नरेन्द्र देव' तथा श्री ब्रह्मानन्द द्वारा सम्पादित ''टुवर्ड्स सोशलिस्ट सोसाइटी'' ग्रंथ ने इस बात का प्रचार देश-देशान्तर में कर दिया कि आचार्य जी बाबू सोहन लाल के पौत्र थे। क्या यह सत्य है?

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में राजनीतिक विभाग के अध्यक्ष रह चुके प्रोफेसर मुकुट बिहारी लाल जी की रचना ''आचार्य नरेन्द्र देव. युग और नेतृत्व'' इस सम्बन्ध में कुछ और कहती है। यथा:, ' उनके जन्म के समय उनके दादा श्री कुंज बिहारी लाल अवध के प्रसिद्ध नगर फैजाबाद में बर्तनों का कारोबार करते थे और पिता श्री बलदेव प्रसाद सीतापुर में अपने चाचा श्री सोहनलाल के शिष्य मुंशी मुरलीधर के साथ वकालत करते थे। दोनों सगे भाई की तरह रहते थे।'' प्रोफेसर मुकुट बिहारी लाल की रचना के वक्तव्य का तात्पर्य यह है कि बल्देव प्रसाद जी के पिता और आचार्य नरेन्द्र देव के दादा (बाबा) श्री कुंज बिहारी लाल जी थे। श्री कुंज बिहारी लाल जी फैजाबाद में बर्तनों का कारोबार करते थे। श्री सोहन लाल जी मुंशी बल्देव प्रसाद जी के पिता न होकर मुंशी बल्देव प्रसाद जी के चाचा थे। मुंशी मुरलीधर श्री सोहन लाल जी के शिष्य थे। प्रोफेसर मुकुट बिहारी लाल जी के ग्रन्थ में अध्यापक सोहनलाल तथा मुरलीधर के शिष्य के विवरण के सम्बन्ध में केनिंग कालेज का कहीं कोई उल्लेख नहीं हुआ है। सोहन लाल जी ने किस विद्यालय में पढ़ाया और उनसे मुरलीधर जी ने किस विद्यालय में पढ़ा? इस प्रश्न पर प्रोफेसर मुकुट बिहारी लाल जी की रचना मौन है।

डा. सेन द्वारा सम्पादित तथा इण्डियन हिस्टोरिकल सोसाइटी द्वारा प्रकाशित ''डिक्शनरी आफ नेशनल बायोग्राफीज'' नामक ग्रंथ में उद्धृत सर्वश्री एल.दीवानी तथा रघुकुल तिलक के लेख में कहा गया है- ''उनके (आचार्य नरेन्द्र देव के) जन्म के समय कुंजामल फैजाबाद में बर्तनों की एक बहुत ही समृद्ध दुकान चला रहे थे तथा उनके पिता सीतापुर में कानून की वकालत कर रहे थे। सन 1893 कुंजामल की मृत्यु पर बल्देव प्रसाद जी जिन्होंने वकील की हैसियत से अनुभव प्राप्त कर

लिया था तथा कुछ ख्याति भी पा ली थी, उठकर फैजाबाद चले गये जहाँ कुटुम्ब की पैतृक सम्पत्ति का प्रबन्ध करने के लिए उनकी आवश्यकता थी।'' डा. सेन द्वारा सम्पादित उपर्युक्त राष्ट्रीय जीवन चरितो के कोष के अनुसार, आचार्य जी श्री कुजामल के पौत्र थे। जब आचार्य जी एक बात कह रहे हो तथा डा केसकर और हमारे गुरुवर प्रो वी के.एन मेनन तथा बृह्मानन्द जैसे विद्वानो का समर्थन कर रहे हो बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय जैसे एशिया के प्रख्यात विश्वविद्यालय के एक समय के राजनीति विभाग के अध्यक्ष दूसरी बात कह रहे हों तथा डा सेन द्वारा सम्पादित ''राष्ट्रीय जीवन चरितो का कोष'' कुछ और कह रहा हो तब उनमे से किसी एक की बात मानने के लिए साहस जुटाना मेरे लिये सरल नही है। आचार्य जी के पितामह कौन थे, बाबू सोहन लाल या कुंजबिहारी लाल अथवा कुजामल? इस विषय पर निर्णय के लिए यदि हम आचार्य जी के पिता बल्देव प्रसाद जी को पच मान लें तो क्या बुरी बात है? इस विषय पर बल्देव प्रसाद जी का निर्णय 2 जून 1877 के नार्थ-वेस्टर्न प्राविसेज एण्ड अवध गजट'' के पृष्ठ 639 पर प्रकाशित नार्थ वेस्टर्न प्राविसेज हाईकोर्ट आफ जुडीकेचर की 31मई, 1877की हाइकोर्ट के तत्कालीन कार्यवाहक रजिस्ट्रार तथा हाईकोर्ट की परीक्षा परिषद के कार्यवाहक सचिव मि.जी टी स्पेन्की द्वारा हस्ताक्षरित, विज्ञप्ति सख्या-11 करती है जो सन् 1877 को 30, 31 जनवरी तथा 1, 2, 3 तथा 4 फरवरी को हाईकोर्ट द्वारा ली गयी परीक्षाओ के फलस्वरूप 13 उत्तीर्ण व्यक्तियो के नाम देते हुए उनमे श्री बल्देव प्रसाद जी आत्मज श्री कुजामल जी निवासी फैजाबाद अवध को पाचवॉ स्थान देती है। उक्त परीक्षा मे जो 13 व्यक्ति उत्तीर्ण हुए थे उनमें प्रथम स्थान इलाहाबाद के रामनारायण आत्मज गनेशी लाल दूसरा स्थान आजमगढ के राजनाथ प्रसाद आत्मज महाबीर प्रसाद, तीसरा स्थान मैनपुरी के रूनपाल सिह आत्मज राम निवाज सिह, चौथा स्थान आगरा के पी बाल आत्मज एम बाल, पाचवाँ स्थान फैजाबाद के बल्देव प्रसाद आत्मज कुजामल, छठा स्थान मुगेर के असद अली पुत्र असनद अली, सातवां स्थान लखनऊ के सूरज नारायण पंडित आत्मज श्याम नारायण पंडित, आठवाँ स्थान आगरा के प्रियोनाथ बनर्जी आत्मज रामनाथ बनर्जी, नवाँ स्थान इलाहाबाद के डब्लू.सी.जी.मैक्फर्सन, दसवाँ स्थान इलाहाबाद के एच.एच टेलर आत्मज टी.जी.टेलर, ग्यारहवाँ स्थान बनारस के कालीदास चौधरी आत्मज पार्वती चरन चौधरी बारहवाँ स्थान मुरादाबाद के मुहम्मद इसमाईल आत्मज मुहम्मद सलीम तथा तेरहवाँ स्थान गोरखपुर के लक्ष्मीधर सिंह आत्मज सुखनिधान का था। निश्चय ही हाईकोर्ट द्वारा 31 मई 1877 को निर्गत विज्ञप्ति मे बल्देव प्रसाद जी के पिता जी का नाम वही होगा जो स्वयं बल्देव प्रसाद जी ने अपने हाथों से अपनी हाईकोर्ट की परीक्षा के आवेदन-पत्र मे लिखा होगा। बल्देव प्रसाद जी ने यह परीक्षा पंडित मोतीलाल जी से 6 वर्ष पूर्व उत्तीर्ण की थी। मोतीलाल जी को नार्थ वेस्टर्न प्राविसेज एंड अवध के हाईकोर्ट

ऑफ जुडीकेचर द्वारा वकील की उपाधि देने के लिए जो आने वाली परीक्षा म उत्तीर्ण की विज्ञप्ति 16 मार्च, 1883 को हुई थी।

मुंशी बल्देव प्रसाद जी ने कलकत्ता विश्वविद्यालय की इन्ट्रेन्स परीक्षा बरेली कालेज के छात्र के रूप मे भारत सरकार के ''गजट'' के 3 जनवरी, 1874 क द्वितीय खण्ड के पृष्ठ-6 के अनुसार, द्वितीय श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। जब भारत सरकार का गजट कहता है कि मुशी बल्देव प्रसाद जी ने बरेली कालेज मे अध्ययन किया था तो आचार्य जी द्वारा प्रस्तुत इस तथ्य को कि उनके पिता जी ने केनिंग कालेज मे अध्ययन किया था, समर्थन देने का साहस मुझमे नही है। पुनश्च मुशी बल्देव प्रसाद जी के चाचा अथवा यो कहिये कि श्री कुजामल जी के छोटे भाइ मोहन लाल जी ने कलकत्ता विश्वविद्यालय की इन्ट्रेन्स की परीक्षा, भारत सरकार क 6 जनवरी 1872 के ''गजट'' के भाग-2 के पृष्ठ संख्या 15 के अनुसार मुरादाबाद स्कूल के माध्यम से उत्तीर्ण की थी, केनिंग कालेज के माध्यम से नही। यहाँ यह भी स्मरणीय है कि मोहन लाल जी ने इन्ट्रेन्स की परीक्षा बल्देव प्रसाद जी स केवल दो वर्ष पूर्व ही उत्तीर्ण की थी। उपर्युक्त दोनो व्यक्तियो के इन्ट्रेन्स परीक्षा उत्तीर्ण करने के दो वर्षों के अन्तराल मे कहाँ मुरलीधर जी सोहनलाल जी के शिष्य हुए थे मै सारे प्रयासो के बाद भी न जान सका।

सन 1877 के सरकारी ''गजट'' की प्रविष्टियों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि मुशी बल्देव प्रसाद जी सन 1878 मे सीतापुर वकालत करने पहुँचे थ। उस समय तक लखनऊ व सीतापुर के मध्य रेल की लाइन नहीं बिछी थी। रेल सीतापुर मे प्रथम बार 15 नवम्बर, 1886 मे पहुँची थी। सन 1878 मे सीतापुर पहुँचकर बल्देव प्रसाद जी सन 1893 मे अपने पिता श्री कुजामल की मृत्यु पर्यन्त सीतापुर मे ही रहे। 15 वर्षों की अवधि के सीतापुर निवास ने मुशी बल्देव प्रसाद जी को किस रूप मे और कहाँ तक प्रभावित किया, यह जानने का भी थोडा बहुत प्रयास हम सभी को करना होगा।

सीतापुर नगरी का जन्म सन 1857 के विद्रोह के पश्चात हुआ था। जिस समय मुशी बल्देव प्रसाद जी सीतापुर पहुँचे थे, उस समय सीतापुर नगरी बस रही थी। सीतापुर जनपद की जमीदारियाँ और तालुकेदारियाँ महाजनी और वाणिज्य मे लगे सभी क्षत्रियो के बीच केन्द्रित थीं। अपनी कानूनी योग्यता के कारण बल्देव प्रसाद जी ने सामन्तो तथा व्यापारियो के बीच यद्यपि अपना पृथक स्थान बना लिया था फिर भी वह सीतापुर के सामाजिक परिवेश के प्रभाव मे सामन्तशाही प्रवृत्ति मे आने से अपने को न बचा सके। फैजाबाद पहुँचकर उन्होंने अपनी वकालत की सारी कमाई एक बडा जमीदार बनने मे लगा दी। इसलिए बल्देव प्रसाद जी की समृद्धि का क्षेत्र पंडित मोती लाल नेहरू के क्षेत्र से सर्वथा दूर हो गया। मोती लाल

जी वकालत की अपनी आय प्रयाग के सामाजिक वातावरण के प्रभाव मे अपनी वकालत की समृद्धि मे लगाते रहे। वकालत के क्षेत्र मे मोती लाल जी से सात वर्ष वरिष्ठ होकर भी एक बड़े जमींदार बनने की आकांक्षा के कारण बल्देव प्रसाद जी का वकालत के क्षेत्र मे मोती लाल जी से आगे बढ़ना तो दूर रहा, वह मोतीलाल नेहरू के समकक्ष भी न रह सके।

बल्देव प्रसाद जी के द्वितीय पुत्र अविनाशी लाल का ही नहीं प्रथम पुत्र महेन्द्र देव का जन्म भी सीतापुर प्रवास के दिनो मे हुआ था। अविनाशी लाल के नरेन्द्र देव होने की कहानी आगे कही गयी है। आचार्य जी के पिता का जन्म फैजाबाद मे हुआ था और माँ जवाहर देवी का जन्म मठिया कप्तानगंज जिला देवरिया (जो पहले गोरखपुर जिले मे था) मे हुआ था।



जीवन के आरम्भिक दिन

आचार्य नरेन्द्र देव का जन्म सीतापुर में 31 अक्टूबर , 1889 कार्तिक शुक्ल अष्टमी सम्वत् 1946 को हुआ था। आचार्य नरेन्द्र देव चार भाई थे, बहने दो थी।

शैशवावस्था में ही नरेन्द्र देव जी अपने पिता का मन रखने के लिए, सध्या-वन्दना और भगवद्गीता समेत रूद्री का पाठ करने लगे थे। एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण से उन्होने सस्वर वेदपाठ की शिक्षा भी ली थी। तुलसी कृत रामचरितमानस, हिन्दी महाभारत और सूर सागर के साथ अमरकोष और लघु कौमुदी आदि को प्रौढ होने से पूर्व ही वह हृदयंगम कर चुके थे।

बचपन मे नरेन्द्र जी जिन व्यक्तियों के सम्पर्क मे आये उनमे प्रथम पंडित मदन मोहन मालवीय थे। बाबू बल्देव प्रसाद जी मालवीय जी के सम्पर्क में सन् 1888 की दिसम्बर मे उस समय आये थे जब प्रयाग में हुए कांग्रेस के चौथे अधिवेशन के समय उन्होंने कांग्रेस में प्रथम बार, सीतापुर जनपद के एक प्रतिनिधि के रूप में अपने चरण रखे थे। मालवीय जी की यशोकीर्ति उन दिनों देश की हर दिशा मे सुनाई देती थी। बल्देव जी और मालवीय जी के बीच इस प्रकार दिसम्बर, 1888 मे जन्म सम्बंध उत्तरोत्तर प्रगाढ़ होता गया। इतिहास-पुरुष मालवीय जी का कृपापात्र बनने के दस माह बाद बल्देव प्रसाद जी को पुत्रलाभ हुआ लेकिन उस समय नियति के इस खेल को कोई नहीं समझ सका था कि किसी सामान्य शिशु ने नही, बल्कि भावी इतिहास-पुरुष ने जन्म लिया है।

मालवीय जी तथा पिता जी के प्रभाव ने उनकी अभिरुचि को भारतीय सस्कृति की ओर मोड़ दिया। अपनी इस आध्यात्मिक रुझान के समय नरेन्द्र देव जी फैजाबाद मे छात्र थे। मालवीय जी फैजाबाद पहुँचे थे। पिता जी के आग्रह पर बालक नरेन्द्र ने मालवीय जी को गीता का एक पूरा अध्याय पढ़कर सुनाना पड़ा। नरेन्द्र देव जी के गीता के श्लोको के शुद्ध [illegible] से मालवीय जी आनन्द विभोर

हो उठे। नरेन्द्र देव जी की प्रतिभा पर रीझ कर मालवीय जी ने दसवाँ पास कर प्रयाग के हिन्दू छात्रावास मे रहकर पढने के लिए उन्हे आमन्त्रित किया। दसवाँ पास कर वह इलाहाबाद पहुँचे और मालवीय जी के पूर्व आदेश का अनुपालन करके हिन्दू-छात्रावास में रहने लगे।

मालवीय जी के पश्चात, दूसरे व्यक्ति जिनके सम्पर्क मे बाल रूप नरेन्द्र देव आये, माधव प्रसाद मिश्र थे। वह फैजाबाद के निवासी और बगला हिन्दी व सस्कृत भाषाओ के प्रकाड पडित, सुन्दर लेखक तथा देशभक्त थे। बगला भाषा की एक रचना ''देशेर कथा'' का हिन्दी का अनुवाद कर वह बडे विख्यात हुए। किन्तु उनकी वह रचना विद्रोहात्मक होने के कारण अग्रेज सरकार द्वारा जब्त हुई थी। जब नरेन्द्र देव जी उनके सम्पर्क मे प्रथम बार आये, उनका नाम अविनाशी लाल था। पडित माधव प्रसाद मिश्र के हाथो अविनाशी लाल का नाम बदल कर नरेन्द्र देव हो गया। मिश्र जी को यह नया नाम सम्भवत इसलिए अच्छा लगा था क्योकि सन्यासी होने से पूर्व स्वामी विवेकानन्द का वही नाम था।

सन् 1902 मे नरेन्द्र देव जी ने स्कूल मे प्रवेश लिया। फैजाबाद स्कूल मे चरण रखते ही उन्हे दत्तात्रेय भीखा जी तथा रानाडे नाम के अध्यापक मिले। अध्यापक रानाडे को विद्यालय मे प्रतिदिन देखकर आचार्य जी को महादेव गोविन्द रानाडे का स्मरण होना स्वाभाविक था, क्योकि उन्हे आचार्य जी ने लखनऊ कांग्रेस अधिवेशन मे सामाजिक सम्मेलन के अध्यक्ष पद को सुशोभित करते देखा था। अध्यापक रानाडे तथा महादेव गोविन्द रानाडे के प्रभाव ने सामाजिकता को नरेन्द्र देव जी के मानस मे बडी गहराई से बैठा दिया। आचार्य जी अपनी शैशवावस्था से ही अपने चारो ओर के वातावरण से प्रभावित होते हुए दिखाई दिये। इसका प्रमाण उनका साथियो के साथ देखा-देखी अयोध्या के मेले मे 16 वर्ष की आयु मे सिगरेट पीना था। सौभाग्य से उस सिगरेट के धुएं ने उन्हे विकल कर दिया और इस तरह सिगरेट का आदी होने से बचा लिया।

सन् 1906 मे नरेन्द्र देव जी जब दसवी कक्षा के छात्र थे, स्वामी रामतीर्थ उसी वर्ष फैजाबाद मे उनके अतिथि रहे। रामतीर्थ जी की आयु उस समय 32 वर्ष थी। उन दिनो वह फलाहारी थे। उस यात्रा के समय फैजाबाद में उन्होने ब्रह्मचर्य और वेदान्त पर दो भाषण किए थे। नरेन्द्र देव जी पर उन भाषणो का बडा प्रभाव पडा। स्वामी रामतीर्थ ने सन् 1910 मे गगा मे समाधि लेकर अपनी इहलीला समाप्त की। उनके विचारो को व्यक्त करने वाली ''रामवर्षा'' नामक भजनावली आचार्य जी का जीवन-पर्यन्त सबल बनी रही।

आचार्य नरेन्द्र देव की स्वामी रामतीर्थ जी से पहली भेट बाल्यावस्था तथा

प्रौढ़ता की संधि बला के समय हुइ थी। 12 वर्ष की आयु मे उन्होन सन् 1902 म अध्ययन के लिये फैजाबाद के जिला विद्यालय मे चरण रखा था। वहाँ की छठी कक्षा मे भरती हो वर्ष 1904 मे उन्होने वहा की आठवी कक्षा उत्तीर्ण की। उसी समय उनके पिता ने गया के एक परिवार मे उनका विवाह कर दिया। उनकी पत्नी अधिक दिन जीवित न रही और दूसरा विवाह आगरा में प्रेमादेवी के साथ हुआ।

सन् 1906 मे उन्होने इलाहाबाद विश्वविद्यालय की इण्ट्रेंस परीक्षा पास की और फैजाबाद से चलकर उच्च अध्ययन के लिए इलाहाबाद पहुँचे। इलाहाबाद पहुँचने से पहले फैजाबाद मे व्यतीत छात्र जीवन में दत्तात्रेय भीखा जी रानाडे मास्टर राधेश्याम तथा राधे रमन लाल जी की सदाचार और साधना की जो गहरी छाप उन पर पडी, वह आजीवन उन पर बनी रही। अध्ययन के लिए उन्हें प्रयाग मे पाच वर्ष रहना पडा। प्रयाग मे वह सन् 1906 से लेकर सन् 1911तक रहे थे। उनके छात्र जीवन का एक वर्ष चेचक निकल आने के कारण व्यर्थ चला गया। इसलिए इण्टरमीडिएट की व बी ए. की परीक्षाए उत्तीर्ण करने मे उन्हे चार वर्ष के स्थान पर पाच वर्ष लग गये, यद्यपि उन्होने प्रयाग की दोनो परीक्षाये प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। प्रयाग के उन पांच वर्षों के प्रवास मे डा. गगा नाथ झा तथा लोकमान्य तिलक के व्यक्तित्वो की उन पर गहरी छाप पडी, जिसने यदि उनमे एक ओर भारतीय सस्कृति के प्रति अनुराग का जन्म दिया तो दूसरी ओर, उनके अन्तराल में तिलकवादी उग्रवाद को प्रज्ज्वलित किया।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की बी.ए परीक्षा प्रथम स्थान के साथ प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करने पर युवक नरेन्द्र देव के हृदय में इगलैण्ड जाकर पढने तथा आई सी एस की परीक्षा में बैठने की आकाक्षा जागी, किन्तु माता के दिव्य आग्रह ने उन्हे इग्लिस्तान जाने और आई.सी.एस. होने से रोका, जिससे नरेन्द्र देव रूपी समाजवादी मन्जूषा देश के स्वतन्त्रता संग्राम हेतु सुरक्षित रह गयी।

नरेन्द्र देव जी के हृदय मे जगा भारतीयो के प्रति अनुराग उन्हे इस उच्च अध्ययन हेतु क्वीस कालेज बनारस ले गया, जहाँ जाकर उन्होने इतिहास विषयक 'ग्रुप डी' की एम ए. कक्षा मे प्रवेश किया। उन्होंने एम ए. की परीक्षा क्वीन्स कालेज बनारस मे उत्तीर्ण की थी। उनके छात्र जीवन की वही एक परीक्षा थी जो किन्हीं कारणो से वह प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण न कर सके थे। सन् 1913 मे जब वह अध्ययन समाप्त कर काशी से फैजाबाद चलने लगे, डाक्टर वेनिस ने उनसे अजमेर जाकर गवर्नमेण्ट कालेज में सस्कृत का अध्यापन कार्य करने को कहा। डाक्टर वेनिस का प्रस्ताव उन्हे स्वीकार न हुआ। उसे अस्वीकार कर वह घर लौटे। पिता जी उन्हे अपने साथ वकालत मे ही लगाना चाहते थे। अतः सन् 1913 मे फैजाबाद से उन्हें वकालत पढने के लिए पुन इलाहाबाद लौटना पडा, जहाँ से

दो वर्षों के उपरान्त बैचलर आफ ला की उपाधि लेकर वकालत करने वह फैजाबाद लौटे।

जिस समय नरेन्द्र देव जी म्योर कालेज मे बैचलर आफ ला के प्रथम वर्ष के छात्र के रूप मे प्रयाग मे अध्ययन कर रहे थे, सातवाँ प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन (वर्ष 1912के अक्टूबर मास मे) डा सतीश चन्द्र बनर्जी की अध्यक्षता मे फैजाबाद मे हुआ। डा सतीश चन्द्र बनर्जी की गणना म्योर कालेज मे कानून के अध्यापक होने के साथ-साथ देश के योग्यतम न्यायशास्त्रियो मे हुआ करती थी। अत यह हो नहीं सकता था कि जब डा बनर्जी ऐसे उनके अध्यापक इलाहाबाद से चलकर उनकी नगरी फैजाबाद मे आये हो उनके छात्र नरेन्द्र देव वहाँ न पहुँचे हो। किन्तु नरेन्द्र देव जी के सस्मरणो मे उसका कोई उल्लेख नही है। इसलिये इस विषय पर मौन साधना ही अपेक्षित है।



लोकमान्य तिलक का प्रभाव

आचार्य नरेन्द्र देव जी की शैशवावस्था मे 1899 मे घटी एक घटना से उनके जीवन को एक युगान्तरकारी मोड मिला। उस वर्ष इंडियन नेशनल काग्रेस का वार्षिक अधिवेशन लखनऊ के उस मैदान मे हुआ था, जहाँ आज मेडिकल कालेज स्थित है। राय बंशीलाल उस अधिवेशन के आयोजक तथा स्वागताध्यक्ष थे श्री गगा प्रसाद वर्मा उसकी स्वागत समिति के महामन्त्री थे। अधिवेशन की अध्यक्षता एक भूतपूर्व आई सी एस. रमेश चन्द्र दत्त कर रहे थे। उसके साथ होने वाले सामाजिक सम्मेलन की अध्यक्षता महादेव गोविन्द रानाडे ने की थी। उस सम्मेलन मे स्वामी श्रद्धानन्द जी उपस्थित थे। उन्होने अपनी पुस्तक ''इनसाइड काग्रेस के पृष्ठ सख्या 129-33 पर उस घटना का आँखो देखा हाल, जिससे नरेन्द्र देव जी गम्भीर रूप मे प्रभावित हुए थे निम्नवत् प्रस्तुत किया है

''कारागार से मुक्त होकर प्रतिनिधि के रूप मे काग्रेस के लखनऊ अधिवेशन मे भाग लेने लोकमान्य तिलक लखनऊ पहुँचे। पंडाल मे प्रवेश कर जब वह शात मुद्रा मे बम्बई के प्रतिनिधियो के बीच बैठने जा रहे थे किसी ने उन्हे पहचान लिया और खडे होकर उस महान जननेता के सम्मान मे तीन बार हर्षध्वनियाँ की। सभी श्रोता जिनमे मच पर बैठे लोग भी सम्मिलित थे अपने-अपने पैरो पर खडे हो गये। किन्तु एक दर्जन कुछ महन्त ऐसे दिखायी देने वाले लोग बैठे के बैठे ही रह गये। सभी श्रोताओं ने लोकमान्य से मच पर जाने का अनुरोध किया। जनता के उस आग्रह को देखकर महन्त नेताओ के चेहरे सफेद पड गये। उन्हे भय हो गया कि कही वे उग्रवादी नेता के बहकावे मे न आ जाये। ऐसा सकट देख लोकमान्य को अपने स्थान से हटना स्वीकार न हुआ। महन्त नेताओ को शान्ति मिली। आया सकट टल गया। ऐसी घटनाओ का प्रभाव वहाँ बालको पर पडे बिना कैसे रह सकता था? बालक बालक होता है। ध्वन्यात्मक घटनाओ की ओर आकर्षित होना बालको का स्वभाव होता है। नरेन्द्र जैसा असाधारण

बालक ऐसा [illegible] में तिलक की ओर बिना आकर्षित हुए कैसे रह जाता।"

सन 1905 में कांग्रेस के बनारस-अधिवेशन में जिसकी अध्यक्षता गोपालकृष्ण गोखले कर रहे थे अपने पिता के साथ वह सम्मिलित हुए। वहाँ★ अपने प्रेरणा-पुरुष तिलक की छवि एक बार पुनः उन्होंने देखी। इस सम्मेलन में कांग्रेस के मंच पर पहली बार एक सुन्दर महिला का अवतरण हुआ था। वह महिला महाकवि रवीन्द्र नाथ टैगोर की भांजी सरला घोषाल थीं। वह उस सम्मेलन में आयीं और उन्होंने वन्देमातरम् गीत गाया। सरला जी के सौन्दर्य और स्वर के प्रभाव में वहाँ पर नरेन्द्र देव तथा सम्पूर्णानन्द जैसे युवकों का मानस वन्देमातरम्-मय हो जाना स्वाभाविक था।

सन् 1905 में काशी कांग्रेस में जिस रूप में उन्होंने अपने इष्ट नेता लोकमान्य तिलक को दूसरी बार देखा वह एक प्रकार से उन्हें 1899 में हुए उनके प्रथम दर्शन का स्मरण कराने वाला था। काशी के अधिवेशन में गोपाल कृष्ण गोखले की ओर से भारतीय जनता से प्रिंस आफ वेल्स, इंग्लैण्ड के सबसे बड़े राजकुमार का स्वागत करने का अनुरोध करने के लिए जो संकल्प रखा गया था लोकमान्य तिलक की ओर से उसका विरोध हुआ। लोकमान्य तिलक का संघर्ष वहाँ उपस्थित युवकों के सामने आया जिनमें नरेन्द्र देव जैसे युवक भी विद्यमान थे। वाद-विवाद हुआ। गोखले द्वारा प्रतिपादित संकल्प कांग्रेस ने स्वीकार किया। लोकमान्य ने उसके विरोध-स्वरूप अधिवेशन त्यागा। 1899 के पश्चात् 1905 में कांग्रेस के अधिवेशन में प्रथम बार लोगों को अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोही स्वर सुनने को मिले और वे भी ऐसे जो लोकमान्य तिलक के मुखार-बिन्दु से मुखरित हुए थे। इस प्रकार एक बार पुनः तिलक आचार्य जी के लिए चित्ताकर्षक बन गये।

काशी अधिवेशन के दूसरे वर्ष कांग्रेस का अधिवेशन★ कलकत्ते में हुआ। इस बार दादा भाई नौरोजी ने उसकी अध्यक्षता की। दादा भाई नौरोजी उस अधिवेशन में विशेष आकर्षण के केन्द्र थे, क्योंकि वह उस समय इंग्लैण्ड में बसकर ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के सदस्य हो चुके थे। उन्होंने तिलक की इस ऐतिहासिक उक्ति को कि ''स्वतंत्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है'' अपने भाषण से स्वर तथा अमरता प्रदान की। ''स्वराज्य'' शब्द नौरोजी की वाणी से कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में गुंजारित हो उठा। ''स्वराज्य'' की तान के साथ-साथ वहाँ ''स्वदेशी'' की धुन भी तीव्र गति से सुनाई दी। बंगाल के विभाजन से आन्दोलित बंग-वासियों की नगरी

★ काशी में कांग्रेस का 1905 का अधिवेशन 27 तथा 30 दिसम्बर को हुआ तथा कलकत्ता अधिवेशन 26 से 29 दिसम्बर 1906 के मध्य हुआ था।

में अधिवेशन होने के कारण उन दिनों के कांग्रेस के नेताओं को स्वदेशी वस्तुओं को अपनाना पड़ा तथा अंग्रेजी वस्तुओं का बहिष्कार करना पड़ा। उस समय नरेन्द्र देव जी इलाहाबाद में पढ़ रहे थे। उस अधिवेशन में भाग लेने के लिए वह इलाहाबाद से कलकत्ता पहुँचे और रिपन कालेज में ठहरे। ''स्वदेशी'' तथा ''स्वराज्य'' के समर्थकों तथा विरोधियों के बीच वहाँ हुए वाकयुद्ध को उन्होंने देखा। दादा भाई नौरोजी की विद्यमानता ने उस समय तो कांग्रेस को दो धड़ों में विभाजित होने से रोका, किन्तु आगे वह कांग्रेस को वह दो दलों में विभाजित होने से रोक न सकी। दोनों दलों के नेता उत्तर प्रदेश के कांग्रेसजनों को अपने-अपने पक्ष में करने के लिए योजना बनाने लगे। लोकमान्य तिलक तथा विपिन चन्द्र पाल ने यह कार्य कलकत्ता से ही प्रारम्भ कर दिया। दोनों ने बड़ा बाजार में जहाँ उत्तर प्रदेश के लोगों का सदा से बाहुल्य रहा है सार्वजनिक सभायें कर हिन्दी भाषा में भाषण किये। इस सभा में नरेन्द्र देव जी भी विद्यमान थे। तिलक हिन्दी भाषा में जैसा नरेन्द्र देव जी ने देखा, उतना अच्छा नहीं बोल पाये थे जितना अच्छा विपिन चन्द्र पाल बोलते थे। कलकत्ता अधिवेशन की चहल-पहल की समाप्ति पर दोनों पक्षों के नेता उत्तर प्रदेश के लिए चल पड़े। इस प्रकार उत्तर प्रदेश पहुँचने वालों में लोकमान्य तिलक प्रथम थे। लोकमान्य जी अपने इस राजनीतिक अभियान के सन्दर्भ में जब इलाहाबाद पहुँचे, उनका स्वागत करने के लिए कोई भी कांग्रेस का नेता इलाहाबाद रेलवे स्टेशन पर नहीं पहुँचा था। कर्मवीर व सुन्दर लाल जी के नेतृत्व में, जो उन दिनों इलाहाबाद नगरी के छात्र नेता हुआ करते थे, नरेन्द्र देव जैसे विद्यार्थियों ने इलाहाबाद रेलवे स्टेशन पर लोकमान्य का स्वागत कर उनको बग्घी में बैठाया तथा उसे खींचकर एक वकील साहब के बंगले के हाते तक ले जाना चाहा, जहाँ वकील साहब की अनुपस्थिति में उनकी पत्नी की अनुमति से तिलक जी की सभा का आयोजन किया गया था। तिलक जी सभा में तो गये किन्तु अपनी बग्घी को छात्रों से खिंचवाना उन्हें स्वीकार न था, क्योंकि वह चाहते थे कि छात्र अपने उस प्रकार के साहस तथा उत्साह को किसी अन्य अच्छे काम में लगाए। (दृष्टव्य परिशिष्ट–4)

कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में तथा उसके पश्चात् लोकमान्य तिलक★ की प्रयाग यात्रा से नरेन्द्र देव जी में जन्मे राजनीतिक संस्कार प्रबल होते गये तथा उन्होंने, आँग्ल भाषा में पारंगत होने पर उन्हें तिलक की रचनाओं को पढ़ने की ओर प्रेरित किया। यह सब कार्य उन्होंने इलाहाबाद में किया था। उनके विचार जैसा नरेन्द्र जी ने स्वयं स्वीकार किया, इलाहाबाद में पुष्ट हुए। श्री रमेश दत्त के भारतीय आर्थिक इतिहास, ''श्री दादा भाई नौरोजी की ''पावर्टी एण्ड ब्रिटिश रूल इन इंडिया'' तथा सर विलियम डिग्बी की रचनाओं ने उन दिनों के भारतीय

★ तिलक जी की यह प्रयागयात्रा 7 जनवरी 1907 को हुई थी।

युवकों को प्रभावित किया जिनमें से जवाहर लाल जी तथा नरेन्द्र देव जी पृथक नहीं किये जा सकते। पंडित जवाहर लाल नेहरू के अनुसार इन रचनाओं ने उन्हें उतना ही तथा उसी रूप में प्रभावित किया था जितना फ्रांस की राज्य क्रान्ति के समय माटेस्क्यू, वोल्टेयर तथा रूसो की रचनाओं ने फ्रांसीसी युवकों को प्रभावित किया था। नौरोजी तथा डिग्बी की रचनाएं बताती हैं कि भारत का अतीत कितना सम्पन्न था और वह अंग्रेजों के हाथ लुटकर कैसे दीन तथा विपन्न बना था।

लोकमान्य तिलक को दूसरी बार सन् 1908 में जेल-यात्रा करनी पड़ी। उन पर राजद्रोह का मुकदमा चला। उस मुकदमे में उनके वकील बैरिस्टर जोसेफ कैप्टरिक थे। न्यायाधीशों के सामने तिलक के वकील की एक न चली और अदालत को उनके साक्ष्य भी मान्य न हुए। तिलक को कठोर कारावास का दण्ड मिला और वह बंदी बनाकर भारतभूमि से दूर बर्मा ले जाये गये जहाँ उनको माण्डले जेल में रखा गया। दण्ड की कठोरता तथा बंदी के रूप में तिलक के देश निकाले को लेकर उस समय देश भर के युवकों के हृदतंत्री विद्रोह के स्वरों से झंकरित हो उठी थी। लोकमान्य के बंदी बनाये जाने के विरोध में बम्बई के कारखानों में श्रम जीवियों की हड़ताल हुई, जो इस देश की पहली आम हड़ताल थी।

तिलक के कारावास तथा बम्बई के कारखानों में श्रमिकों की आम हड़ताल के विषय पर सोवियत क्रांतिकारी नेता लेनिन ने एक विचार पूर्ण लेख लिखा, जो भारतीय राष्ट्रीयता में समाजवादी तत्व की पूर्वसूचना माना जा सकता है। इसके फलस्वरूप भारत के राष्ट्रीय इतिहास में उस संक्रमण काल की सृष्टि हुई, जिसमें एक ओर जहाँ गांधी जी को भारत के राष्ट्रीय नेतृत्व के सर्वोच्च आसन पर प्रतिष्ठित किया, वहीं दूसरी ओर, देश के उत्तर-पश्चिमी क्षितिज से लेनिनवादी चन्द्रिका आलोकित हुई दिखायी पड़ी। यह सस्था, स्वाभाविक था कि युवा नरेन्द्र देव के हृदय में तिलक के प्रति उत्पन्न अगाध श्रद्धा मार्क्सवाद और लेनिनवाद के स्पर्श से भी अछूती न रह सकी। बर्मा की माण्डले जेल में तिलक के सात वर्षीय प्रवास काल में यही उचित था कि उत्तर भारत के नरेन्द्र देव जी जैसे युवा राष्ट्रीय साधक मौन रहकर अपनी क्रियाशीलता के लिए उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करते। प्रतीक्षा के उन दिनों में भारतीय युवा मानस पर इंग्लैण्ड के उदारवादी और लेनिन के मार्क्सवादी दर्शनों का प्रभाव पड़ना अनिवार्य था, और यह स्वाभाविक था कि नरेन्द्र देव जी इनका चिन्तन-मनन करते।

सन्1914 का अन्त होते-होते लोकमान्य तिलक माण्डले जेल से मुक्त होकर स्वदेश वापस आये। गोपाल कृष्ण गोखले उस समय तक गोलोकवासी हो चुके थे। सन 1915 में कारागार से मुक्त होते ही उन्होंने होम रूल लीग की स्थापना कर भारतीयों की स्वराज्य की मांग की सघन योजना बनाई। उसी प्रकार की एक संस्था श्रीमती एनी बीसेण्ट ने भी उन्हीं दिनों बनाई थी। दोनों व्यक्तियों का उद्देश्य एक

था। जो लोग तिलक से दूर रहकर .... रहना चाहते थे अथवा जिन्हें भारतीयों से अधिक अंग्रेजी व्यक्तियों की संस्कृति में आस्था थी, वे श्रीमती एनी बीसेण्ट के साथ हो लिये और जो किसी भी तरह अंग्रेजी व्यक्तियों और संस्कृति से दूर रहना चाहते थे, वे लोकमान्य तिलक की होम रूल लीग में सम्मिलित हो गये। आचार्य जी की लोकमान्य तिलक में प्रगाढ़ आस्था थी। अत उस सम्बन्ध में कोई निर्णय लेने से पूर्व वह लोकमान्य जी से परामर्श करना आवश्यक मानते थे। अत एक अवसर पाकर उन्होंने तिलक जी से पूछा कि दोनो में किस लीग में उनका सम्मिलित होना उचित है? तिलक ने उन्हे बताया कि दोनो संस्थाओं का उद्देश्य एक ही है अत वह दोनों में से जिस किसी मे चाहे सम्मिलित हो लें। इग्लैण्ड से 4-5 वर्ष पूर्व लौटे जवाहर लाल जी की रुचि स्पष्ट थी। वह इग्लिस्तानी संस्कृति से प्रभावित थे तथा वर्ष 1917 के वर्ष की इण्डियन नेशनल कांग्रेस की अध्यक्षा एनी बीसेण्ट की लीग में सम्मिलित होना उनके लिये स्वाभाविक था।[4] जवाहर लाल जी श्रीमती एनी बीसेण्ट की होम रूल लीग की उत्तर प्रदेशीय शाखा के मंत्री बने। एनी बीसेन्ट जी की होम रूल लीग के अभियान के सम्बन्ध मे जब 1917 मे एक दिन जवाहर लाल जी फैजाबाद पहुँचे, नरेन्द्र देव जी उनके सम्पर्क मे आये तथा उनकी होम रूल लीग के फैजाबाद जिले की शाखा के मंत्री बन गये।

दिसम्बर, 1916 मे लखनऊ मे हुए कांग्रेस-अधिवेशन मे तिलक सम्मिलित हुए और उस समय वहाँ मोहनदास करमचन्द गाधी भी उपस्थित थे। लखनऊ में कांग्रेस का विभाजन समाप्त हुआ और उसके दोनो खण्ड पुन: ऐक्यबद्ध हो गये। कांग्रेस के इस अधिवेशन में तिलक सर्वोच्च नेता के रूप मे प्रतिष्ठित हुए थे और मोहनदास को 'महात्मा' बनाने की स्थितियाँ भी उत्पन्न होने लगी थी। लखनऊ कांग्रेस मे ही वह बीज पडा जो आगे चलकर चम्पारन के गांधी के रूप मे देश के सामने आया। लोकमान्य तिलक की उग्रवादी राजनीति की मुद्रा में ढले नरेन्द्र देव भी गाधी जी द्वारा चलाये गये आन्दोलन से अप्रभावित नही रहे। चम्पारन के गाधी ने उन्हे चमत्कृत तो किया किन्तु उस चमत्कार से उनको कोई राजनीतिक दिशा नहीं मिली।

1916 की लखनऊ कांग्रेस के उपरान्त उभरने वाले होमरूल आंदोलन ने नरेन्द्र देव को पहली बार राजनीतिक चेतना से अनुप्रणाणित किया। इस आन्दोलन का संचालन एक ओर डा. एनी बीसेण्ट तथा दूसरी ओर लोकमान्य तिलक अपने-अपने ढग से कर रहे थे। सन् 1919 मे, वैशाखी पर्व के दिन अमृतसर के जलियान वाला बाग मे

ए निर्मम हत्याकाण्ड की घटना ने, जिसमे कुख्यात अंग्रेजी सैनिक अधिकारी जन
ायर ने निहत्थे स्त्री-पुरुषों और बच्चों के खून की होली खेली थी भारत के राष्ट्रीय
ान्दोलन का स्वरूप ही बदल दिया। यहीं से होमरूल लीग जैसे आन्दोलन अर्थहीन
या तिरस्कृत हो गये और गांधी जी की वेगवती आंधी के साथ-साथ भारतीय इतिहास में
ांधी-युग का सूत्र-पात हुआ।



अध्ययन और अभिरुचि

सन् 1911 से लेकर सन् 1917 तक आचार्य जी का समय मुख्यत: अध्ययन मे बीता था। इस अवधि में भारत के प्राचीन इतिहास से सम्बन्धित कुछ विषयो को लेकर "विज्ञान" नामक पत्रिका मे उन्होंने अनेक लेख लिखे। तिलक के माण्डले जेल से बाहर आने पर वहा तिलक जी द्वारा लिखित "गीता रहस्य" नामक पुस्तक छपी। आचार्य जी ने उसका गहन अध्ययन किया। उन्ही दिनों महर्षि अरविन्द ने भी गीता के सम्बन्ध मे अनेक लेख लिखे। उन्हे भी नरेन्द्र देव जी ने बडे अनुराग से पढा। धीरे-धीरे महर्षि अरविन्द की ओर उनका आकर्षण बढता ही चला गया। 'वन्देमातरम्" पत्रिका मे अरविन्द जी के भारतीय राष्ट्रीयता से सम्बन्धित अनेक लेख प्रकाशित हुये थे। आचार्य जी ने अरविन्द जी की "वन्देमातरम्" पत्रिका मे प्रकाशित उनके अनेक लेखो को सन 1920 मे "जातीयता" का नाम देकर पुस्तकाकार रूप मे प्रकाशित किया। यहा यह स्मरणीय है कि बगला भाषा मे 'जातीयता" शब्द राष्ट्रीयत्ता का पर्याय माना गया है, वर्णों का नहीं।

सन् 1918 मे विश्व युद्ध समाप्त हुआ। विजयी राष्ट्रो के मध्य वारसाई (फ्रास) संधि हुई। उसके फलस्वरूप लीग आफ नेशन्स की सृष्टि हुई तथा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन जन्मा, और सन् 1919 के कानून के रूप मे भारतवर्ष को नया शासन विधान मिला। लीग आफ नेशन्स का जो सविधान बना था, उसमे उसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक न्याय बताया गया था।

वर्ष 1919 के अक्टूबर मास मे वाशिगटन में जन्मे अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सगठन ने मजदूर वर्ग को एतिहासिक प्रतिष्ठा दी। सन् 1919 के भारतीय शासन विधान ने प्रगट होकर भारतीयों को उसके कार्यान्वयन मे सहयोग करना चाहिये अथवा असहयोग, इसकी चर्चा करने के लिये बाध्य किया। उस समय का कोई भी ऐसा प्रबुद्ध व्यक्ति न था, जो इन तीन समस्याओ की ओर आकृष्ट न हुआ हो, और इनका विश्लेषण होने लगा। "सामाजिक न्याय" के लक्ष्य तथा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सगठन की सर्जना से लोगो का ध्यान श्रमिको तथा उनके आन्दोलनो की ओर गया उन्हीं दिनों और मद्रास के बकिंघम मिला मे अनुपम

हिल उठी थी। मजदूर वर्गों से सम्बन्धित साहित्य और सिद्धान्तो की ओर चिंतनशील व्यक्तियों की मनीषा का उन्प्रेरित होना अनिवार्य था। यही नरेन्द्र देव जी के साथ हुआ। श्रमिक आन्दोलनों की भूल-भुलैया में भटकने-भटकने बहने की जिज्ञासा रूस जा पहुँची। किन्तु यह अवधि श्रम सबधी उमगो और विचारो के मथन की थी क्रियान्वयन की नहीं।

सन 1918 के अन्त में काग्रेस का अधिवेशन दिल्ली में हुआ था। प मदन मोहन मालवीय ने उसकी अध्यक्षता की थी। माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों का स्वागत किया जाय अथवा तिरस्कार काग्रेस के उस अधिवेशन का यह मुख्य विचारणीय विषय था। विषय से संबधित चर्चा के प्रारम्भ होने पर काग्रेस उस विषय पर सहयोग असहयोग तथा प्रति-सहयोग की तीन विभिन्न विचारधाराओं में बटी दिखाई दी। समय ने करवट ली। वर्ष 1918 व्यतीत हुआ। उसका स्थान वर्ष 1919 ने लिया। अप्रैल का महीना आया। उसने जलियांवाला बाग का नृशंस हत्याकाण्ड देखा। उस काण्ड से ऐसा लगा कि जलियावाला बाग की सभा मे उपस्थित जनसमुदाय को बलि-वेदी पर चढाकर वह राष्ट्रीय यज्ञ का नया अनुष्ठान प्रारम्भ करने जा रहा है। पंडित मदन मोहन मालवीय उस समय काग्रेस के अध्यक्ष थे। वर्ष 1918 के अन्त मे काग्रेस का वार्षिक अधिवेशन जलियांवाला बाग की नगरी अमृतसर मे हुआ तथा पडित मोतीलाल नेहरू ने उसका सभापतित्व किया। अमृतसर अधिवेशन मे जलियावाला बाग की रक्त सिंचित रज से एक ऐसा प्रबल झझावात उठ खडा हुआ जो उत्तरोत्तर साम्राज्यवाद-विरोधी तथा असहयोगी होता चला गया। किन्तु उस विषय पर अन्तिम निर्णय काग्रेस को लेना था। उसके छ महीने बाद काशी मे आल इण्डिया काग्रेस कमेटी की बैठक हुई। मोतीलाल जी उस समय काग्रेस के अध्यक्ष थे। उसमें भाग लेने को लोकमान्य तिलक काशी पहुँचे। युवक नरेन्द्र देव वहा उपस्थित थे। लोकमान्य तिलक से विचार-विमर्श कर उन्होंने अपने को लोकमान्य से सहमत पाया। उन्होंने माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारो मे सहयोग करने की विचारधारा के समर्थन का निश्चय किया। आल इण्डिया काग्रेस कमेटी की काशी बैठक के तीन माह पश्चात् सितम्बर, 1920 में इण्डियन नेशनल काग्रेस का विशेष अधिवेशन कलकत्ता मे हुआ। पंडित मोतीलाल नेहरू के स्थान पर लाला लाजपत राय ने काग्रेस का अध्यक्ष पद सभाला। वह उस वर्ष के प्रारम्भ मे ही अमरीका से, यूरोप होकर लौटे थे। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सगठन की प्रसूति-वेला मे लाला जी वाशिंगटन मे विद्यमान थे। उन्हे पूरी तरह ज्ञान था कि रूस मे क्या हो गया था। कलकत्ता अधिवेशन मे काग्रेस ने अपने विधायको को विधान परिषदो की सदस्यता से त्यागपत्र देकर बाहर आने को कहा और अनेक लोगों ने ऐसा ही किया। वर्ष की गोधूलि वेला मे काग्रेस ने अपना ऐतिहासिक अधिवेशन नागपुर में किया।

काशी विद्यापीठ और आचार्य-पद

आचार्य जी के अन्तरतम की अभिलाषा सदा सरस्वती तथा राजनीति के देवालयो मे बैठकर ज्ञानार्जन तथा सेवा-साधना की रही थी। इस दृष्टिकोण से उनके जीनव का जितना अश काशी विद्यापीठ मे बीता उससे अधिक सुखमय अश उनके लिए कोई न था। शिव प्रसाद गुप्त जी ने 10 फरवरी 1921 को काशी म 'हर प्रसाद शिक्षा निधि' स्थापित कर काशी विद्यापीठ जन्म को दिया और आचार्य नरेन्द्र देव जी की निराशा को दूर कर अध्ययन तथा राजनीति सबधी उनकी अभिलाषाओ और आकांक्षाओ को समुज्ज्वल किया। बाबू शिव प्रसाद गुप्त ने उसके लिए जो न्यास बनाया, नरेन्द्र देव जी को भी उसका एक न्यासी बनाया था। किन्तु इसका ज्ञान नरेन्द्र देव जी को न था। असहयोग आन्दोलन की पताका हाथ मे लिए जवाहर लाल नेहरू जब 27 जनवरी सन् 1921 को अकबरपुर(फैजाबाद)के किसानो की सभा में पहुँचे, उनकी दृष्टि नरेन्द्र देव जी पर पडी। नेहरू जी को काशी मे विद्यापीठ की स्थापना की बात तथा उसके लिए नरेन्द्र देव जी की उपयोगिता याद आयी। नेहरू जी ने नरेन्द्र देव जी से काशी जाकर विद्यापीठ में अध्यापन कार्य करने को कहा, जो आचार्य जी ने स्वीकार कर लिया।

काशी विद्यापीठ पहुँचकर आचार्य जी बाबू श्रीप्रकाश जी के सम्पर्क मे आये। यह संबध कालान्तर मे उनके जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया। नरेन्द्र देव जी की "आचार्य" की उपाधि का उद्भव श्रीप्रकाश जी के ही वाङ्मय से हुआ था। वह ही आगे चलकर उनके तथा महात्मा गांधी के बीच प्रगाढ सम्बन्धो के सेतु बने थे। काशी विद्यापीठ के प्रथम अध्यक्ष, श्रीप्रकाश जी के पिता डा भगवान दास जी थ। उनके विद्यापीठ की अध्यक्षता छोड़ने पर सन् 1926 मे नरेन्द्र देव जी उसके अध्यक्ष हुये थे।

काशी विद्यापीठ की स्थापना प्रारम्भ में कुमार विद्यालय के रूप में हुई थी। बाद मे वह और के में होकर स्नातकों की

विद्यापीठ का शिक्षण संस्थान मात्र कुमार विद्यालय था। सन 1926 में जब नरेन्द्र देव जी प्राचार्य बने, वह महाविद्यालय था। काशी पहुँचते ही छात्रों के कौशल को विकसित करने के लिये नरेन्द्र देव जी ने ''शास्त्रार्थ सभा'' की स्थापना की थी। सभा की बैठकें समय-समय पर हुआ करती थी। 1922 मे जब शास्त्रार्थ सभा की एक बैठक डा भगवान दास की अध्यक्षता मे हुई, आचार्य नरेन्द्र देव ने देश मे कांग्रेस की गिरती हुई साख के सम्बन्ध मे एक विचारपूर्ण भाषण किया। इस भाषण से उस दिन आचार्य जी के चिन्तन का गाम्भीर्य लोगो के सामने आया और डा. भगवानदास तथा अन्य सभी श्रोता उनके आजीवन प्रशसक बन गये। 1923 मे आचार्य जी ने दो वर्षों से चलती आई ''शास्त्रार्थ सभा'' का कायाकल्प करके उसे विद्यार्थी परिषद मे बदल दिया।

1919 के जलियान वाला बाग नरमेध के बाद देश मे प्रतिवर्ष अप्रैल के दूसरे सप्ताह मे (7 से 14 अप्रैल तक) ''राष्ट्रीय सप्ताह'' मनाया जाने लगा था। काशी विद्यापीठ मे प्रतिवर्ष यह सप्ताह बडे उत्साह के साथ मनाया जाता था और आचार्य नरेन्द्रदेव इसके कार्यक्रमो मे बडे मनोयोग से भाग लिया करते थे। सन् 1926 मे ' आज'' समाचार-पत्र के प्रवर्तक तथा काशी विद्यापीठ के सस्थापक बाबू शिव प्रसाद गुप्त जब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के काशीपुर (नैनीताल) में हुए राजनैतिक सम्मेलन के अध्यक्ष बने, प्रदेश कांग्रेस का कार्यालय इलाहाबाद मे चलकर काशी विद्यापीठ पहुँच गया। इस प्रकार राष्ट्रीय आन्दोलन का कुआ स्वत राष्ट्रीय चेतना के प्यासे नरेन्द्र देव के पास जा पहुँचा। उस वर्ष नवम्बर 1927 मे प मोतीलाल नेहरू और प जवाहरलाल नेहरू के, सोवियत-रूस की यात्राओं से सम्बन्धित समाचारो, विचारों और सस्मरणों का भारत के पत्र-पत्रिकाओं मे व्यापक रूप से प्रकाशन हुआ जिससे रूसी क्रांति सम्बन्धी हलचलो का भारत के युवा राजनीतिक मनीषियो पर गहरा प्रभाव पडा। 1919 और 1920 मे रूसी क्रांति केवल कविताओं और निबन्धो की विषय वस्तु बन कर रह गयी थी, किन्तु अब उनकी दृष्टि क्रांति की अवधारणा पर केन्द्रित हो गयी।

सन् 1920 के दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह मे जब विजय राघवाचारियर की अध्यक्षता मे कांग्रेस का अधिवेशन नागपुर मे हुआ और जब उसमे अदालतो के बहिष्कार और विधान परिषदों के बहिष्कार की बात उठी तब नरेन्द्र देव जी ने कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन के निर्णय को आत्मसात करने का निश्चय किया क्योंकि तिलक जी का यह मानना था कि बहुमत की बात लोगों को माननी चाहिए, चाहे वह उनके व्यक्तिगत मतो के विरुद्ध ही क्यो न हो। इसलिए अदालतो और विधान परिषदों के बहिष्कार का नागपुर मे असफल विरोध कर जब आचार्य जी फैजाबाद लौटे तब उन्होंने वकालत छोडी, परिषदो के निर्वाचनो से मुँह मोडा तथा असहयोग आन्दोलन मे लग गये। सन् 1921 में चौरी-चौरा की हिंसात्मक घटना हुई जबकि गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन वापस ले लिया। इसके पश्चात होने वाला कांग्रेस का अहमदाबाद अधिवेशन ठीक से न हो सका। सन् 1922 में चौरी-

चौरा काण्ड से स्तब्ध, मूक और किंकर्तव्यविमूढ़ कांग्रेस देशबन्धु चितरंजन दास के सभापतित्व में गया अधिवेशन में एकत्र हुई। यहाँ कांग्रेस गांधीवादी नीति में परिवर्तन व अपरिवर्तन के विवाद को लेकर दो शिविरों में विभाजित दिखाई दी। एक शिविर था, कांग्रेस की राजनीति में गांधी जी के अनुयायियों का, जिनका नेतृत्व श्री राजगोपालाचार्य तथा राजेन्द्र बाबू कर रहे थे। दूसरा शिविर था परिवर्तनवादियों का, जिनका नेतृत्व देशबन्धु चितरंजन दास तथा पंडित मोतीलाल नेहरू कर रहे थे। नरेन्द्र देव जी गया में चितरंजन दास तथा मोतीलाल जी के विचारों के समर्थक थे। गया कांग्रेस में भी, उसी नागपुर कांग्रेस की तरह, गांधीवादी विचारधारा का प्राबल्य रहा। किन्तु परिवर्तनवादियों ने हार न मानी। विद्रोही बनकर उन्होंने स्वराज्य पार्टी को जन्म दिया, जिसने विधान सभा तथा विधान परिषदों में प्रवेश करके ही दम लिया। तीन वर्षों के पश्चात सन् 1925 के दिसम्बर मास में कांग्रेस का अधिवेशन जब श्रीमती सरोजनी नायडू की अध्यक्षता में कानपुर में हुआ, उस समय कांग्रेस संगठन के अन्दर विद्यमान कांग्रेस के अपरिवर्तनवादियों व स्वराज्य पार्टी के बीच की द्वन्द्वात्मकता का अन्त हुआ। उस दिन से सन् 1930 तक परिषदों के बाहर और विधान परिषदों के अन्दर कांग्रेस एक दिखाई दी। इसके पूर्व लोग विधान परिषदों के अन्दर स्वराज्य पार्टी को और उसके बाहर कांग्रेस को देखते थे। सन 1927 में कांग्रेस आचार्य नरेन्द्र देव को कांग्रेस के टिकट पर उत्तर प्रदेश विधान परिषद् का चुनाव लड़ाना चाहती थी और नरेन्द्र देव जी ने लड़ना स्वीकार भी कर लिया था। किन्तु अपने बड़े भाई श्री महेन्द्र देव जो, जिन्हें वह पिता तुल्य मानते थे, के लड़ने का निश्चय करने पर वह स्वयं चुनाव के मैदान से हट गये।

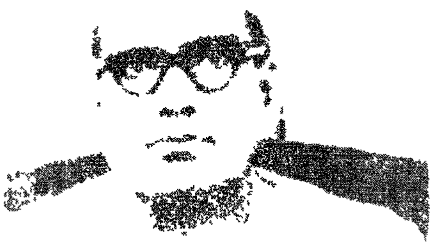
आचार्य जी प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य जून 1921 में बनाये गये। 'इंडिपेण्डेंट' नामक समाचार-पत्र के 21 जून 1921 के अंक में प्रकाशित समाचार के अनुसार पं. मोतीलाल नेहरू प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष (नियमानुकूल) निर्वाचित हुए और कार्यकारिणी में फैजाबाद मंडल का प्रतिनिधित्व करने के लिए आचार्य नरेन्द्र देव तथा गोपाल सहाय को सदस्य बनाया गया। इसी तरह बनारस मंडल से श्रीप्रकाश जी तथा शीतल प्रसाद गुप्त कार्यकारिणी के सदस्य बनाये गये।

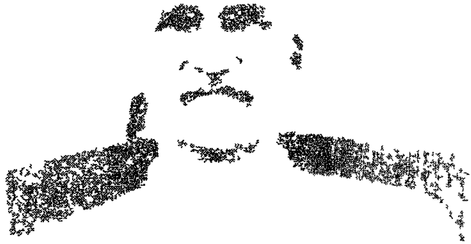
काशी विद्यापीठ के जन्म लेने के कुछ महीनों बाद वहाँ रूसी साम्यवादी साहित्य पहुँचना प्रारम्भ हो गया था। इस कार्य के सम्पर्क-सूत्र शौकत उस्मानी साहब थे, जो बीकानेर के डूंगर कालेज में सम्पूर्णानन्द जी के छात्र रह चुके थे। सन 1923 में उन्होंने बाबू सम्पूर्णानन्द जी के माध्यम से गणेश शंकर विद्यार्थी का सत्संग उपलब्ध कर कानपुर में राष्ट्रीय विद्यालय के मुख्य अध्यापक के रूप में



डा भगवान दास और आचार्य नरेन्द्र देव

आचार्य नरेन्द्र देव तथा श्री जय प्रकाश नारायण









आचार्य जी [illegible]



काले मार्च की समाप्ति पर आचार्य जी



खादी पहनने और देशसेवा के लिए संकल्पबद्ध
छात्र को अपने वेतन का एक अंश देते हुए



राज भवन [illegible] में विश्राम करते हुए
(देहावसान से लगभग एक सप्ताह पूर्व लिया गया चित्र)



आचार्य श्री का अन्तिम पत्र
[illegible] [illegible])

रहना और कार्य करना शुरू कर दिया था। उनके कानपुर के घर पर पुलिस का छापा पड़ा और रूसी साहित्य बड़ी संख्या में बरामद हुआ। अंग्रेज सरकार को हिन्दुस्तान में कम्युनिस्ट पार्टी के जन्म की सूचना मिली : बम्बई से श्रीपाद अमृत डांगे, मद्रास से सिंगारावेलु, बंगाल के मुज्जफर अहमद तथा पंजाब से एक सज्जन के खिलाफ वारन्ट निकले। ये सभी लोग बंदी बनाकर कानपुर लाये गये। कानपुर षड्यंत्र केस के नाम से मुकदमा चला जिसमें पाचों लोगों को सजा हुई। उस तलाशी की चपेट मे काशी विद्यापीठ के लोग आते-आते बचे।

10 फरवरी 1928 को काशी विद्यापीठ का सातवाँ दीक्षान्त समारोह सम्पन्न हुआ। इसी दौरान अंग्रेजी सरकार को यह गोपनीय जानकारी मिली थी कि भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के जन्म दाता शौकत उस्मानी की काशी विद्यापीठ में नियुक्ति प्राय निश्चित हो चुकी थी किन्तु वह इसलिए टाल देनी पड़ी कि विद्यापीठ से सम्बन्धित विशुद्ध गांधीवादी लोग विद्यापीठ मे उनके प्रवेश के समर्थक न थे। बाद मे मेरठ षड्यन्त्र केस के सिलसिले में शौकत उस्मानी की गिरफ्तारी और उससे सम्बन्धित मुकदमे म विद्यापीठ में उनकी नियुक्ति के मामले को सदा के लिये टाल दिया। फिर भी मार्क्सवादी साहित्य और मार्क्सवादी विचारधारा वहाँ पहुँचती रही। काशी विद्यापीठ के जिन लोगो को मार्क्सवाद की तरंगो ने विलोडित किया उनमे आचार्य नरेन्द्र देव प्रमुख थे। इस बीच एक ओर यदि आचार्य जी मार्क्सवादी दर्शन के अध्ययन में प्रवृत्त हुए तो दूसरी ओर उन्होने ''इंडिपेण्डेंस आफ इंडिया लीग' का संचालन-कार्य भी संभाला।

1926 का वर्ष नरेन्द्र देव के जीवन में बड़ा महत्व रखता है। उस वर्ष वह डा भगवान दास के स्थान पर काशी विद्यापीठ के अध्यक्ष हुए थे। उसी वर्ष उत्तर प्रदेश (उस समय की प्रान्तीय) कांग्रेस कमेटी का कार्यालय प्रयाग से चलकर काशी पहुंचा तथा काशी विद्यापीठ से सचालित होने लगा था। उसी वर्ष उनका समाजवादी संस्कृति से अभिभूत प जवाहर लाल नेहरू से निकट सम्पर्क हुआ। सन् 1926 ने उन्हें उस प्रकार समय के उस चौराहे पर ले जाकर खड़ा किया, जहा से उन्हें शिक्षा तथा शिक्षण के अतिरिक्त राजनीति की ओर ले जाने वाला मार्ग दिखाई पड़ा। सन् 1929 में 26 सितम्बर को काशी विद्यापीठ के दीक्षान्त समारोह मे अध्यक्षता करने आये गांधी जी से उनका निकट से संपर्क हुआ। समारोह की अध्यक्षता करने के लिये काशी पहुंचे गाधी जी ने कहा था -"नरेन्द्र देव तो नर-रत्न हैं जिन्हें बहुत पहले ही जान लेना चाहिए था।"

सन 1927-28 मे वह श्री बल्लभ सहाय जी के माध्यम से श्री राहुल सांकृत्यायन के सम्पर्क मे आये। उन दिनों राहुल जी बाबा रामदास के नाम से जाने जाते थे। राहुल जी ने आचार्य जी से श्री गंगा शरण जी का परिचय कराया था जो बाद में आचार्य जी के विश्वास पात्र व्यक्तियों मे एक माने जाने लगे थे। 1929 के

नवम्बर मास की विद्यापीठ पत्रिका मे आचार्य जी का "ब्रिटिश मजदूर सरकार और भारत" शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ।

अपने पिताजी की मृत्यु के कारण आचार्यजी अपने घर फैजाबाद चले गये। वहा से आने के पश्चात वह सन 1930 तक नियमपूर्वक विद्यापीठ मे कार्य करते रहे। नमक सत्याग्रह के सिलसिले मे 1930 मे वह इलाहाबाद के बाबू पुरुषोत्तम दास टण्डन तथा काशी के बाबू शिव प्रसाद गुप्त के साथ बस्ती मे गिरफ्तार हुए जहा दण्डित होकर उनको तीन माह कारावास मे रहना पडा। कारावास मे उन्हे दमा का आक्रमण हुआ। बाद में तो यह रोग उन्हे जीवनपर्यन्त दुःखी करता रहा।



राष्ट्रीय आंदोलन के विविध आयाम

रूसी राज्य क्रान्ति ने तथा श्रम संगठन की सर्जना ने मजदूरो के महत्व को बहुत बढ़ा दिया। सन 1925 मे आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस का अधिवेशन जब बम्बई मे हुआ उस अवसर पर मजदूर प्रतिनिधियो ने यह माग की कि उनके संगठन का भविष्य मे निर्वाचित होने वाला अध्यक्ष कोई बाहरी व्यक्ति न होकर मजदूरो मे से ही कोई व्यक्ति हो। तत्कालीन भारतीय राजनीति जगत मे मजदूरो के बढ़ते हुए वर्चस्व के कारण सन 1926 मे मद्रास मे हुए आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अधिवेशन को उन्नाव जिले मे जन्मे श्रमिक नेता श्री चन्द्रिका प्रसाद तिवारी को अपना अध्यक्ष चुनना पडा। उसी वर्ष दादा भाई नौरोजी के बाद दूसरे भारतीय श्री सकलतवाला ब्रिटिश पार्लियामेंट के सदस्य हुए। सकलतवाला साम्यवादी विचारधारा के व्यक्ति थे। उन्ही सकलतवाला को साथ लेकर जवाहर लाल जी और मोतीलाल जी सन् 1927 के नवम्बर मास मे मास्को पहुँचे और लेनिन से मिले। लौटकर मोतीलाल जी ने देश की प्रान्तीय परिषदो तथा भारतीय विधान सभा की सदस्यता के लिए कांग्रेस की ओर से प्रत्याशियो को खडा किया और उन्हे चुनाव लडाया। युवको और प्रबुद्ध राष्ट्रीय नागरिको के बीच साम्यवादी राजनीति और चिंतन के प्रति धीरे-धीरे लोगो की जिज्ञासा बढ़ती जा रही थी। उनकी जिज्ञासा मे वृद्धि के साथ कांग्रेसजनो में प. जवाहर लाल तथा प. मोतीलाल नेहरू की लोकप्रियता उनके साम्यवादी रुझान के कारण बढ़ी। दोनो ही भारतीय जनता के आकर्षण के केन्द्र बन गये। इस प्रकार आचार्य नरेन्द्र देव जी की भी, जैसा उन्होने स्वय अपने लेखो और भाषणो मे स्वीकार किया है सन 1926 से प. जवाहर लाल मे आस्था बढ़ने लगी थी।

सन् 1927 मे कांग्रेस का अधिवेशन जब डा. अन्सारी की अध्यक्षता मे मद्रास मे हुआ उस अवसर पर प. जवाहर लाल नेहरू ने कांग्रेस के सामने पूर्ण स्वाधीनता को अपना लक्ष्य बनाने का संकल्प रखा, जो वाद-विवाद के उपरान्त निर्विरोध स्वीकार हुआ। यहा यह स्मरणीय है कि गांधीजी उस अधिवेशन मे उपस्थित न थे। जो लोग मद्रास मे नेहरू जी के उस संकल्प के स्वीकार होने से दुखी हुए थे, उनमे एक महात्मा गांधी भी थे। संकल्प स्वीकार हो जाने के बाद कांग्रेस के अन्दर उसके प्रति दृढ़ आस्था पैदा करना आवश्यक समझकर जवाहर

लाल जी ने सुभाष चन्द्र बोस और जाकिर हुसैन साहब के साथ इंडिपेण्डेंस आफ इंडिया लीग नामक संस्था बनायी जिसने पूर्ण स्वतन्त्रता के उद्देश्य की घोषणा हेतु कांग्रेस को बाध्य करने के लिये कमर कस ली।

इंडिपेण्डेंस आफ इंडिया लीग की प्रान्तीय शाखा का कार्यालय 15 दिसम्बर 1928 को काशी विद्यापीठ में खुला। इसके अध्यक्ष पं जवाहर लाल नेहरू, सचिव आचार्य नरेन्द्र देव और संघटक बाबू शिव प्रसाद गुप्त, बाबू श्रीप्रकाश तथा पं कृष्ण चन्द्र शर्मा बनाये गये। इस संस्था का उद्देश्य केवल इतना ही नहीं था कि पूर्ण स्वतन्त्रता कांग्रेस का लक्ष्य बने, बल्कि यह भी था कि स्वतन्त्र भारत में न्याय पर आधारित समाज की रचना हो। सन् 1928 में इसकी कई बैठकें कलकत्ता में हुई जिनमें नरेन्द्र देव जी ने भाग लिया। यहीं पर वह सुभाष चन्द्र बोस तथा यूसुफ मेहर अली के सम्पर्क में आये और यह सम्पर्क जीवन-पर्यन्त बना रहा।

कांग्रेस का 43वाँ अधिवेशन पं. मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में कलकत्ता में (28 दिसम्बर 1928 से 1 जनवरी 1929) हुआ। इस अधिवेशन में कांग्रेस ने मोतीलाल जी की सांविधानिक योजना का अनुमोदन किया जो विज्ञ लोगों के अनुसार औपनिवेशिक स्वराज्य की योजना थी। कांग्रेस के कलकत्ता-अधिवेशन में उपस्थित जिन युवा कांग्रेस जनों ने मोती लाल जी की और औपनिवेशिक स्वराज्य की योजना के प्रति असन्तोष व्यक्त किया उनमें कस्तूरी रंगा स्वामी अयंगार, पं जवाहर लाल नेहरू सुभाष चन्द्र बोस आचार्य नरेन्द्र देव आदि प्रमुख थे। इन युवा कांग्रेस जनों ने अंग्रेज साम्राज्यवादियों के सामने पूर्ण स्वतन्त्रता की माग को रखने का प्रयास किया। कांग्रेस के इस अधिवेशन के पहले तथा बाद में कुछ ऐसी घटनाएं हुई, जिनके आधार पर ऐसा कहा जा सकता है कि अपनी-अपनी बात को लेकर दोनों पक्ष विजयी रहे। मोतीलाल जी के पक्षधर सतुष्ट थे कि उनकी योजना पर कांग्रेस अधिवेशन ने अपने अनुमोदन की मुहर लगा दी थी और पूर्ण स्वतन्त्रता के आकांक्षी जवाहर लाल नेहरू, सुभाष नरेन्द्र देव आदि युवा कांग्रेस जनों ने अपने को विजयी समझा, क्योंकि नेपथ्य में लगभग यह तय हो चुका था कि यदि वर्ष भर में अंग्रेज सरकार भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य नहीं प्रदान करती तो फिर भारतवासियों को पूर्ण स्वतन्त्रता से कम किसी बात पर सन्तोष नहीं होगा।

परिणाम यह रहा कि सन् 1929 के अन्तिम दिनों में लाहौर में रावी नदी के तट पर कांग्रेस का जो ऐतिहासिक अधिवेशन हुआ उसमें पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और कांग्रेस ने पूर्ण स्वतन्त्रता का संकल्प लिया। पूर्ण स्वतन्त्रता का लक्ष्य स्वीकार होने के फलस्वरूप औपनिवेशिक स्वराज्य का प्रश्न समाप्त हो गया और ''इंडिपेण्डेंस आफ इंडिया लीग'' नामक संस्था भी निरर्थक होकर अन्तर्धान हो गयी। आचार्य नरेन्द्र देव को भी इस संस्था के कार्य से मुक्ति मिली और लाहौर कांग्रेस के बाद उन्होंने कांग्रेस

1928 ई [illegible] 1929 का [illegible] आई थी [illegible] नरेन्द्र देव [illegible] सन् 1929 का वर्ष [illegible] का प्रदर्शन [illegible] को [illegible] 22 फरवरी 1929 को [illegible] आचार्य नरेन्द्र देव [illegible] निकाला था, बाद में [illegible] सभा में [illegible] श्री [illegible] सिंह और [illegible] मोहन आदि ने सम्बोधित किया [illegible] 7 मार्च को [illegible] आचार्य नरेन्द्र देव [illegible] राजनीतिक [illegible] राजनीतिक [illegible] करने का अवसर आचार्य नरेन्द्र देव को मिला। उन्हीं दिनों [illegible] सुन्दरलाल का 'भारत में अंग्रेजी राज' नामक प्रसिद्ध पुस्तक दो खण्डों में प्रकाशित हुई थी जिसको तत्कालीन विदेशी सरकार ने जब्त कर लिया था। पुस्तक की जब्ती के विरुद्ध आचार्य नरेन्द्र देव जी ने लिखा था, यहाँ यह उल्लेखनीय है कि [illegible] लेखक की [illegible] के सम्बन्ध में आचार्य नरेन्द्र देव जैसे युवा कार्यकर्ता जो भी राजनीतिक कार्य कर रहे थे उनका मूल उद्देश्य पूर्ण स्वतन्त्रता के लिए ही कार्य करना था।

फर्रुखाबाद से काशी लौटकर नरेन्द्र देव जी ने शहीद यतीन्द्र नाथ दास को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिये आयोजित नागरिकों की सभा को सम्बोधित किया। सन् 1929 के अप्रैल के द्वितीय सप्ताह में एक लाल साहित्य बाँटी जा रही थी जिसमें यतीन्द्रनाथ दास के व्यक्तित्व और कृतित्व पर आचार्य जी का संक्षिप्त किन्तु मार्मिक भाषण हुआ। अप्रैल के अन्त में बनारस जिला कांग्रेस कमेटी का राजनीतिक सम्मेलन भी मसहूद अहमद खाँ शेरवानी की अध्यक्षता में हुआ था। इस सम्मेलन के आयोजन के लिये जो स्वागत समिति बनी उसके अध्यक्ष आचार्य नरेन्द्र देव थे। सम्मेलन में स्वागताध्यक्ष के रूप में अपने भाषण में आचार्य जी ने दो महत्वपूर्ण बातें कहीं। उनमें पहली यह थी कि अंग्रेज सरकार की ओर से राजनीतिक सुधारों के सम्बन्ध में जो आश्वासन दिये जा रहे हैं वे सभी हास्यास्पद हैं। दूसरी यह थी कि साइमन कमीशन की रिपोर्ट से हम भारतवासियों को कोई आशा नहीं करनी चाहिये क्योंकि ऐसा करने पर निराश होना पड़ेगा। 1929 में अप्रैल में पिछले सप्ताह तथा पूरा ही महीने का समय आचार्य जी ने श्री गिरजा प्रसाद सुल्तान जी तथा मुतजा हुसैन साहब के साथ मिर्जापुर के किसानों को संगठित करने में लगाया। 9 अगस्त को बनारस के बेलगाज में कांग्रेस की एक सभा में आचार्य नरेन्द्र देव बाबू श्रीप्रकाश श्री बैजनाथ सिंह श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा आदि के भाषण

हुये थे। इस सभा में अपने भाषण में आचार्य जी ने कहा कि भारतवासियों का लक्ष्य औपनिवेशिक स्वराज्य के स्थान पर पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति होना चाहिये। इसके दो दिन बाद 11 अगस्त को लाला लाजपतराय की स्मृति में कांग्रेस की ओर से युवकों का व्यायाम शिविर आयोजित हुआ जिसमें आचार्य जी ने बीरबल जी तथा काशी विद्यापीठ के चुने हुये छात्रों के साथ भाग लिया।

1929 का सितम्बर का महीना आचार्य नरेन्द्र देव के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा। 16 सितम्बर को आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस की यू पी शाखा का प्रथम सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में एक प्रस्ताव रखकर आचार्य जी ने भारतवर्ष के लिये एक ऐसी सांविधानिक व्यवस्था अपनाने की वकालत की जिसमें श्रमिकों की सत्ता हो और उन्हें उचित वेतन, शिक्षा भूस्वामित्व तथा मताधिकार प्राप्त हो। अपने भाषण में उन्होंने इस बात पर प्रसन्नता प्रकट की कि उ प्र में मजदूर संगठन के रूप में एक संगठन जन्म ले चुका है जिसका उद्देश्य समाज को समाजवादी स्वरूप देना है। 25 सितम्बर को गाँधी जी काशी विद्यापीठ के दीक्षान्त समारोह में भाषण करने के लिये विद्यापीठ के प्रांगण में पहुँचे। इस अवसर पर यदि गाँधी जी को प्रिंसिपल नरेन्द्र देव जी नर-रत्न के रूप में दिखाई पड़े तो आचार्य को गांधी जी के व्यक्तित्व में वह आंधी समायी दृष्टिगत हुई जो एक नया आन्दोलन प्रारम्भ कर सभी दिशाओं में हिलोरें पैदा करने जा रही थी। काशी से चलकर गांधी जी लखनऊ पहुँचे और उनकी उपस्थिति में गंगा प्रसाद हाल में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में प जवाहर लाल नेहरू को लाहौर कांग्रेस का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। पहली अक्टूबर को गांधी जी फैजाबाद के अकबरपुर नामक स्थान में पहुँचे जहाँ आचार्य नरेन्द्र देव उनके स्वागत के लिये उपस्थित थे। फिर वर्ष के अन्त में लाहौर में कांग्रेस अधिवेशन हुआ जिसमें भारतवासियों द्वारा पूर्ण स्वतन्त्रता का संकल्प लिया गया। इसके बाद 1930 का वर्ष गांधी की आंधी तथा नमक आन्दोलन के वर्ष के रूप प्रख्यात है।

लाहौर-कांग्रेस के पूर्ण स्वतन्त्रता के संकल्प के अनुसार 1930 का वर्ष प्रारम्भ होते ही देश का कोना-कोना स्वतन्त्रता संग्राम में आन्दोलित हो उठा। 28 फरवरी 1930 को डा आलम की अध्यक्षता में गाजीपुर में जिला राजनीतिक सम्मेलन हुआ जिसमें अपने भाषण में आचार्य जी ने उत्तर प्रदेश के किसानों की दुर्दशा का चित्रण करते हुए कहा कि किसानों का दैन्य उसी दिन दूर होगा और उनका दुर्भाग्य उसी दिन सौभाग्य में बदलेगा, जब भारतवर्ष स्वाधीन हो जायेगा तथा अपना संविधान बना लेगा। मार्च में उधर गुजरात में गांधी जी की डाण्डी-यात्रा के साज सज रहे थे, और इधर काशी के टाउन हाल में नमक सत्याग्रह के अनुरूप ओजस्वी वातावरण उत्पन्न करने के लिए कांग्रेस की सभाएं पर सभाएं हो रही थीं। 17 मार्च 1930 को काशी के टाउन हाल में अपने भाषण में आचार्य जी ने शिवा जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला। यह एक विचारणीय प्रश्न है कि नमक सत्याग्रह आन्दोलन के प्रारम्भ होने के समय आचार्य जी को

शिवाजी का स्मरण क्यों हो आया। स्पष्ट है इसलिए कि शिवाजी उस प्रत्येक साधन को पावन मानते थे जो उन्हें अपनी कार्य–सिद्धि दे सके। उस सभा में बाबू सम्पूर्णानन्द, पं. कृष्णचन्द्र शर्मा तथा डा. बालकृष्ण विश्वनाथ केसकर ने भी अपने-अपने विचार व्यक्त किए थे जो सिद्धान्त लगभग वही थे जो आचार्य जी के थे, किन्तु गांधी जी का कहना था कि लक्ष्य की सिद्धि ही सब कुछ नहीं है बल्कि उसका साधन भी पावन और पुनीत होना चाहिये।

मार्च 1930 का महीना देश के लिए राष्ट्रीय हलचलों का महीना था। नमक सत्याग्रह आन्दोलन का डंका चारों ओर बज रहा था। जवाहरलाल जी इलाहाबाद जिले की हंडिया तहसील को उत्तर प्रदेश में किसान आन्दोलन की बारडोली बनाना चाहते थे। काशी विद्यापीठ के अनेक विद्यार्थियों ने हंडिया जाकर बारडोली के आन्दोलन के अनुरूप किसान आन्दोलन खड़ा करने की आचार्य जी से आज्ञा माँगी। आचार्य जी ने उनको सावधान करते हुए कहा कि इसकी आज्ञा उन्हें तभी मिलेगी जबकि गाँधी जी का आदेश मिल जायेगा। यह घटना आचार्य नरेन्द्र देव जी के अनुशासित जीवन का साक्ष्य है। 29 मार्च को बाबू मोहनलाल सक्सेना की अध्यक्षता में बनारस का वार्षिक जिला राजनीतिक सम्मेलन गंगापुर में हुआ। इस सम्मेलन में नरेन्द्र देव जी ने कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन के पूर्ण स्वतन्त्रता के संकल्प की व्याख्या प्रस्तुत की। 6 अप्रैल को ऐतिहासिक डाँडी-यात्रा की समाप्ति पर गाँधी जी के धरसाणा पहुँचने पर कांग्रेसजनों द्वारा जगह-जगह नमक बनाने के आयोजन होने लगे। 20 अप्रैल 1930 को ऐसी ही एक सभा काशी के अहिल्याबाई घाट पर हुई। 25-26 अप्रैल को काशी के टाउन हाल में और 27 व 30 अप्रैल को चेतगंज तथा ख्वाजा बाकर आदि स्थानों पर सभाएं हुईं, जिनमें आचार्य जी के भाषण हुए।

राष्ट्रीय आन्दोलन के उस काल में आचार्य जी की दृष्टि में चर्खा कितना महत्वपूर्ण था, यह इसी बात से ज्ञात होता है कि उन्होंने 6 से 15 मई तक बनारस के आर्य समाज मन्दिर में लोगों को चर्खा कातना सिखाने के लिए कक्षाएं चलवाईं। मई का पूरा महीना आचार्य जी द्वारा काशी जनपद में स्थान-स्थान पर नमक आन्दोलन सम्बन्धी सभाएं करने में बीता। उन्होंने 7 जून को इलाहाबाद में और 19 जून को उन्नाव में जनसभाओं को सम्बोधित किया। 23 जून को वह गोरखपुर पहुँचे। गोरखपुर में 2-3 जनसभाओं को सम्बोधित कर आचार्य नरेन्द्र देव जी 24 जून को बस्ती पहुँचे। 24 जून को बस्ती में आचार्य नरेन्द्र देव, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन और बाबू शिव प्रसाद गुप्त बन्दी बनाये गये। आचार्य जी बस्ती जेल में 12 अक्टूबर 1930 तक रहे। 12 अक्टूबर को बस्ती जेल से जब वे टंडन जी के साथ छूटे, तो बस्ती के श्री रामबचन सिंह तथा बाबू कृपाशंकर कांग्रेस स्वयंसेवकों के साथ उनका स्वागत करने के लिये जेल के फाटक पर पहुँचे।

भारतीय महिलाओं के जागरण की दृष्टि से वर्ष 1930 की सबसे महत्वपूर्ण घटना काशी मे 10 जुलाई को हुई महिलाओ की सभा है। गुप्तचर विभाग के तत्कालीन प्रतिवेदनों के अनुसार गुप्त सभा में 10 हजार महिलाये उपस्थित थी। श्रीमती कमला नेहरू की काशी की प्रथम सार्वजनिक यात्रा के अवसर पर यह सभा आयोजित हुई थी और उससे बड़ी महिलाओ की सभा इससे पहले काशी में कभी नही देखी गयी थी। इसका सभी ओर व्यापक प्रभाव पड़ा। इस सभा के फलस्वरूप आचार्य नरेन्द्र देव और प्रदेश के अन्य प्रमुख नेताओ की दृष्टि महिलाओ की दयनीय दशा की ओर गयी, जिन्हे कुछ समय तक विधानमण्डलो के लिये न तो मत देने का और न खड़ा होने का अधिकार था। उन दिना कमला जी की तकली कातती हुई एक तस्वीर का बड़ा प्रचार हुआ था और दस जुलाई की उस महिला सभा मे बहुतो को कमला जी उस रूप मे दिखाई दी जिस रूप मे तकली कातती हुई श्रद्धा 'प्रसाद' जी को कामायनी मे दिखायी दी।

वर्ष 1931 आचार्य नरेन्द्र देव द्वारा'स्वराज्य'शब्द की परिभाषा करने मे बीता। उदाहरणस्वरूप उन्होने 31 अगस्त 1931 को जौनपुर जिला राजनीतिक सम्मेलन का सम्बोधित करते हुये अपने भाषण मे स्वराज्य की उस कल्पना की मीमासा की जो लाहौर काग्रेस मे स्वीकृत सकल्प का विषय बनी थी। जौनपुरवासियो को सम्बोधित करते हुये आचार्य जी ने कहा कि स्वराज्य का सही तात्पर्य समझे बिना भारतीय नागरिक उस दायित्व का निर्वाह न कर सकेगे, जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उन पर आ पड़ेगा। इधर नरेन्द्र देव जी जैसे लोग स्वराज्य के लिये लोगो मे रागात्मक भाव उत्पन्न करने के लिय सक्रिय थे और उधर लन्दन मे एक के बाद एक हो रहे गोलमेज सम्मेलनो मे भारतीय आकाक्षाओ का गला घोटा जा रहा था। दूसरे गोलमेज सम्मेलन मे भाग लेने के बाद महात्मा गाँधी के निराश होकर लन्दन से बम्बई लौटते ही सविनय अवज्ञा आन्दोलन पुन उभर पड़ा। पूर्व की भाँति कानूनों की सविनय अवज्ञा पुनः प्रारम्भ हुई। 13 अक्टूबर, 1932 को नरेन्द्र देव ने बरेली जनपद का दौरा किया जिसमे सेठ दामोदर स्वरूप उनके साथ थे। वहाँ से लौटकर आचार्य जी ने करबन्दी आन्दोलन को तीव्रतम बनाने के लिये श्री दुर्गा प्रसाद खत्री के सहयोग से 16 अक्टूबर को एक जुलूस निकाला, जिसके कारण उनको तथा खत्री जी को 16 अक्टूबर, 1932 को बन्दी बनाया गया।

सन 1932 के उत्तरार्द्ध में जबकि अधिकाश राष्ट्रीय नेता जेल में थे प्रदेश में श्मशान जैसी शाति दिखाई देती थी। 31 अगस्त 1933 को प जवाहर लाल नेहरू देहरादून जेल से छूटे और इलाहाबाद पहुँचे। उस समय उनकी माता श्रीमती स्वरूप रानी गम्भीर रूप अस्वस्थ थीं और लखनऊ में उपचार करा रहीं थी। इलाहाबाद से 5 सितम्बर को चलकर जवाहर लाल जी 6 सितम्बर को लखनऊ पहुँचे। लखनऊ मे वह लगभग एक मास रहे और माता जी की चिकित्सा कराने के साथ-साथ उन्होंने काग्रेस के कार्यों को भी गति प्रदान की। 8 अक्टूबर को लखनऊ से चलकर वह 9 अक्टूबर को

इलाहाबाद पहुँचे। 10, 11 और 12 अक्टूबर को जवाहर लाल जी ने आचार्य नरेन्द्र देव सम्पूर्णानन्द तथा बाबू श्री प्रकाश के साथ काग्रेस जनो की एक सगोष्ठी का आनन्द भवन मे सम्बोधित किया।

उपर्युक्त गोष्ठी मे आचार्य नरेन्द्र देव के व्याख्यान का विषय पूर्वी एशियाई देशो मे राष्ट्रीयता का विकास था। प जवाहर लाल नेहरू ने सोवियत-रूस की क्राति और रूसी सविधान पर व्याख्यान दिया। सम्पूर्णानन्द जी ने राज्य की समस्याओ की समीक्षा की और श्री प्रकाश जी ने समाजवादी दर्शन की व्याख्या की। चारो विद्वानो के विचारो से अवगत होकर गोष्ठी ने पाँच अवतरणो का एक संकल्प स्वीकार किया। प्रथम अवतरण के चार भाग थे। प्रथम भाग मे कहा गया था कि हमारा मुख्य उद्देश्य शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करना था। दूसरे भाग मे कहा गया था कि भारतीय राष्ट्रवाद और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के बीच खाई इतनी चौडी है कि दोनो के बीच न तो शान्ति सभव थी और समझौता। तीसरे भाग मे वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित सविधान सभा द्वारा यथोचित विधि से भारत का सविधान बनाने का अनुरोध था। चौथे भाग मे कहा गया था कि राजनीतिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति के साथ-साथ शोषित वर्गों की सामाजिक तथा आर्थिक स्वतन्त्रता की लक्ष्य की भी पूर्ति होनी चाहिए। उक्त चार महापुरुषो द्वारा प्रस्तुत इस सकल्प मे अन्य बातो के साथ-साथ इस बात का संकेत दिया गया कि अभिनव स्वतन्त्र भारत की राजनीतिक शासन प्रणाली का स्वरूप कैसा होना चाहिए। इस संकल्प ने काग्रेस के अन्दर भावी सामाजवादी आन्दोलन के उत्कर्ष के सभावना का भी सकेत दिया था। इनका मन्तव्य था कि भारत को पूर्ण स्वतन्त्रता दिलाने के साथ-साथ एक ऐसे सविधान की सर्जना की जाए जिसमें लोगो को आर्थिक तथा सामाजिक न्याय सुलभ हो और शोषण के लिये कोई स्थान न हो। सक्षेप मे इन चार शीर्षस्थ समाजवादी नेताओ द्वारा प्रस्तुत यह सकल्प (परिशिष्ट–1) एक ऐसा महत्वपूर्ण दस्तावेज है जिसे भारतीय समाजवाद की मदाकिनी की गंगोत्री कहा जा सकता है।

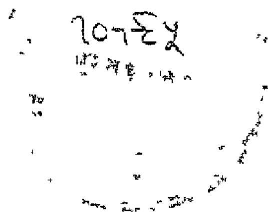
लगभग एक मास के उपरान्त 13 नवम्बर, 1933 को जवाहर लाल जी कमला जी के साथ काशी गए, और वहाँ उन्होंने बाबू सम्पूर्णानन्द की सहायता से मुशी प्रेम चन्द्र बाबू जयशकर 'प्रसाद' आदि प्रमुख साहित्यकारो की बैठक बुलाकर तात्कालिक राजनीतिक समस्याओ पर उनके साथ विचार-विमर्श किया। इलाहाबाद की उपर्युक्त गोष्ठी और जवाहर लाल जी की 13 नवम्बर की काशी यात्रा के फलस्वरूप, कुछ ही महीनो बाद, 1934 की ग्रीष्म ऋतु मे बाबू सम्पूर्णानन्द की छत्रछाया में एक छोटे समाजवादी दल ने जन्म लिया। इस दल के लोगो ने बाबू परिपूर्णानन्द वर्मा कमलापति त्रिपाठी तथा श्री तारापद भट्टाचार्य प्रमुख थे।

सन 1933 की विजयादशमी के आते-आते सविनय अवज्ञा आन्दोलन शात हो चुका

था। सन 1922 के बाद एक बार पुन चिन्तनशील राष्ट्रीय नेता सोचने लगे थे कि क्या भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन अपने उद्देश्य मे असफल हो रहा है? चारो ओर नैराश्य व पराजय का वातावरण था। ऐसे मे नैराश्य के पारावार से ऊब कर नया रूप लेने के लिए भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन एक नये मनु की खोज मे था। उसे मनु मिले और वह थे आचार्य नरेन्द्र देव। अपनी मनीषा की नौका पर बैठे नरेन्द्र देव ने देखा कि एक ओर भारत क तरुणाई अहिंसा मे आस्था खोकर राष्ट्रीय सग्राम के लिये शस्त्र–वितरण कर रही थी और दूसरी ओर मार्क्सवाद से प्रभावित युवको का एक वर्ग किसानो को प्रतिक्रियावादी मान कर गांधी व नेहरू के नेतृत्व के विरुद्ध विद्रोह कर रहा था। इन युवको की दृष्टि मे जनतत्र न केवल एक पूंजीवादी व्यवस्था थी, वरन गाधी और नेहरू का नेतृत्व भी पूंजीवाद को प्रोत्साहन देने वाला था। अतएव ये युवक इस प्रयास मे लग गये कि वे श्रमिको के सहारे जिनको वे सर्वहारा वर्ग मानते थे भारत मे रूसी समाजवादी क्रांति क अनुरूप एक नयी क्राति करे। राष्ट्रवादियो की दृष्टि मे ये लोग नासमझ थे और अनजाने ही रूस जैसी एक विदेशी सत्ता की विदेश नीति के प्रसार का उपकरण बन रहे थ।

1931 मे कराची-काग्रेस मे मौलिक अधिकारो के प्रस्ताव को निर्धारित करन वाली जो समिति बनी थी उसकी रिपोर्ट पर आचार्य जी ने विद्यापीठ की पत्रिका म समाजवाद विषय पर लेख लिखा था। उस लेख को पढने से हमे कराची-काग्रेस द्वारा नियुक्त समिति की रिपोर्ट के फलस्वरूप काग्रेस द्वारा स्वीकृत मौलिक अधिकारो की घोषणा के सबध मे आचार्य जी के विचारो की कुछ झलक मिल जाती है।

सन 1931 समाप्त होते-होते सरकार काग्रेस की शत्रु हो गयी। उसने काग्रेस तथा उससे सम्बद्ध सभी सस्थाओ को गैरकानूनी घोषित कर दिया। सरकार ने 7 जून 1932 को विद्यापीठ पर भी ताला लगा दिया। यह ताला लगभग ढाई वष क उपरान्त जुलाई 1934 मे खुला और विद्यापीठ मे पढाई का कार्य प्रारम्भ हुआ। विद्यापीठ बद होने के लगभग 5 महीने बाद आयोजित एक सभा मे आन्दोलन का उद्देश्य बताते हुए भाषण करने के अभियोग मे श्री दुर्गा प्रसाद खत्री के साथ आचार्य जी पुन गिरफ्तार हुए। उन्हे 200 रु जुर्माने तथा एक वर्ष के कारावास की सजा मिली। इस बार वह बनारस जेल मे रखे गये, जहा पहुचते ही उनका स्वास्थ्य खराब हो गया। सन 1934 मे बिहार मे भयकर भूकम्प आया था। उस भूकम्प मे भारतीय जनता ने, उससे प्रभावित लोगो को राहत देने की जो केन्द्रीय समिति बनायी थी डा राजेन्द्र प्रसाद जी उसके अध्यक्ष तथा आचार्य नरेन्द्र देव उसके सदस्य थे। उस समय आचार्य जी ने भूकम्प-पीडित लोगो की समस्याओ पर प्रकाश डालते हुए एक पुस्तक लिखी थी।



कांग्रेस समाजवादी पार्टी की स्थापना

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी पहले कानपुर षडयन्त्र केस की तथा बाद मे मेरठ षडयन्त्र केस की शिकार हुई। दमन-चक्र मे पड़ने के बाद भी कई स्थानो पर मजदूरो पर उसका गहरा प्रभाव देखा गया। उसके कार्यकर्ताओ ने सन 1928 म बम्बई और कानपुर मे मजदूरो की बड़ी-बड़ी हड़ताले करायी। उसके बाद के दशक के प्रारम्भ मे भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के लोग काग्रेस के विरोधी थे और उससे अलग किसान मजदूर पार्टी बनाकर राष्ट्रीय आन्दोलन का नेतृत्व करने का प्रयास कर रहे थे। उनकी दृष्टि मे आजादी के लिए लड़ने वाला राष्ट्रीय आन्दोलन पूँजीवादी था। उनके अनुसार, लोकतन्त्र एक पूँजीवादी व्यवस्था थी। उक्त दृष्टिकोण और राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ दुर्व्यवहार करने के कारण मार्क्सवाद तथा लेनिनवाद राष्ट्रीय आन्दोलन द्वारा तिरस्कृत होने लगा था। इससे काग्रेस के अन्दर विद्यमान मार्क्सवादी चिन्तित हो उठे। उन्हे लगा कि कम्युनिस्ट पार्टी ऐसी नासमझी की बात कर रही है। जिससे स्वतन्त्रता आन्दोलन तीव्रतर होने के बजाय टूट सकता है और मार्क्सवाद लोकप्रिय होने के बजाय कलकित तथा तिरस्कृत हो सकता है। भारतवासियो को विश्वास था कि कम्युनिस्ट पार्टी की नीति का निर्धारण रूस की वैदेशिक नीति का आधार मानकर हुआ करता है। सन् 1928 मे स्तालिन की सोवियत सरकार के नेतृत्व मे तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट सगठन ने विश्व के विभिन्न देशो की कम्युनिस्ट पार्टियो द्वारा जो भूमिका अदा करने के लिए निर्धारित की थी उससे बाध्द होकर भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के लोग सन् 1928 से लेकर 1934 तक राष्ट्रीय नेताओ और काग्रेस सगठन का विरोध करते रहे तथा उनसे सघर्ष करते रहे। सन 1934 के फरवरी मास मे कम्युनिस्टो के अन्तर्राष्ट्रीय सगठन की यह नीति थी कि प्रत्येक राष्ट्रीय कम्युनिस्ट पार्टी साम्राज्यवाद का विरोध करने के लिये सभी शोषित वर्गों का मोर्चा बनाये किन्तु किसी भी प्रकार से उनका अपने-अपने देशो मे काग्रेस जैसे भारतीय राष्ट्रीय सगठनो के प्रभाव से न केवल दूर रखे, बल्कि उनसे मोर्चा भी ले। भारतवर्ष मे इस प्रकार काग्रेस को यदि एक ओर भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी जैसे उग्रवादी वामपक्षी सगठन का तीव्रतम

विरोध झेलना पड़ा तो दूसरी ओर सन 1932-33 मे सविनय अवज्ञा आन्दोलन के कारण ब्रिटिश सरकार की मार भी लगातार सहनी पड़ी। प्रत्येक आन्दोलन की अपनी सीमा होती है। एक न एक दिन इसकी गति इतिश्री को प्राप्त हो जाती है। काग्रेस का आन्दोलन भी थमा। आन्दोलन की समाप्ति पर लोगो का असफलता ही दृष्टिगत हुई। वे निराश हुए। उस निराशा की स्थिति मे अनेक काग्रेसजनो को लगा कि उन्हें कुछ न कुछ अपना दृष्टिकोण व कार्यक्रम बदलना होगा। उक्त स्थिति से काग्रेस के अन्दर विद्यमान आचार्य नरेन्द्र देव तथा जयप्रकाश नारायण जैसे मार्क्सवादियो को घोर कष्ट हुआ।

सन 1928 से 1934 तक की अवधि मे भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा राष्ट्रीय आन्दोलन का विरोध होते देख मार्क्सवाद तथा समाजवाद मे अभिरुचि रखने वाले कतिपय काग्रेस कार्यकर्ता अपने लिये एक भिन्न मार्ग प्रशस्त करने के लिए अग्रसर हुए। उनकी एक बैठक काशी मे हुई। उन काग्रेसी मार्क्सवादियो की इस बैठक मे सर्वश्री श्रीप्रकाश नरेन्द्र देव जयप्रकाश नारायण गगा शरण सिंह एम आर मसानी सम्पूर्णानन्द एस एन जोशी तथा इनके अतिरिक्त डा सम्पूर्णानन्द जी के अनुसार तारापद भट्टाचार्य कमलापति त्रिपाठी तथा परिपूर्णानन्द वर्मा भी उपस्थित थे। यह बैठक सम्भवत 1934 के अप्रैल मास मे हुई। बाबू सम्पूर्णानन्द जी के अनुसार यह बैठक उनके घर पर तथा मुकुट बिहारी लाल जी के अनुसार श्री प्रकाश जी के घर हुई थी। बाबू श्री प्रकाश तथा बाबू सम्पूर्णानन्द जी दोनो का निवास स्थान काशी मे होने के नाते यह हो सकता है कि इन लोगो की बैठके एक-एक कर दोनो के ही मकानो पर हुई हो।

काशी मे जो उपर्युक्त बैठक हुई उसमे यह निश्चय हुआ कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की बैठक के अवसर पर काग्रेस समाजवादी लोगो का एक सम्मेलन बुलाया जाय, और उनको लेकर काग्रेस के तत्वावधान मे एक समाजवादी दल के सगठन पर विचार किया जाय। इस सम्मेलन के सभापतित्व के लिए लोगो ने सर्वसम्मति से आचार्य नरेन्द्र देव का नाम स्वीकार किया। इस निर्णय के अनुसार मई, 1934 मे अखिल भारतीय काग्रेस पार्टी की बैठक के अवसर पर पटना मे आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता मे एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन ने अखिल भारतीय सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना करने का निश्चय किया और नरेन्द्र देव जी की अध्यक्षता मे नयी पार्टी के सविधान तथा कार्यक्रम का प्रारूप तैयार करने के लिए प्रारूप समिति बनायी गयी। श्री जयप्रकाश नारायण को इस नये सगठन का मत्री नियुक्त किया गया। इसी बीच इसी विचारधारा का एक ग्रुप यूसुफ मेहर अली अच्युत पटवर्द्धन तथा अशोक मेहता के नेतृत्व मे जन्म ले चुका था। पटना सम्मेलन मे

कौंसिल प्रवेश और संसदीय कार्यों के प्रति कांग्रेस जनों की बढती हुई प्रवृत्ति की सख्त आलोचना की गयी और सम्मेलन में समाजवादी दल द्वारा स्वीकृति के लिये एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया। इस प्रकार नरेन्द्र देव जी को भारतीय इतिहास ने उस आन्दोलन का सूत्रधार बनाया जिसे भारत का समाजवादी आन्दोलन कहते हैं।

जुलाई 1934 में हरिजनोद्धार सम्बन्धी दौरा करते हुए गांधी जी काशी पहुँचे। उस समय जयप्रकाश जी का गांधी जी से पत्र-व्यवहार चल रहा था। जयप्रकाश जी ने गांधी जी को लिखा वह नरेन्द्र देव जी से बात करें। काशी विद्यापीठ में नरेन्द्र देव जी और उनके बहुत से साथी गांधी जी से मिले। दो दिन दो-दो घंटे बात हुई। गांधी जी ने समाजवादी दल की स्थापना के लिए उस समय की जाने वाली पहल पर खिन्नता व्यक्त करते हुए कहा था कि यद्यपि वह जीवन भर लडते रहे हैं, फिर भी उन लोगों से लडने की कोई इच्छा नहीं है जो उनके कहने पर राष्ट्रीय आन्दोलनों में सम्मिलित हुए थे। गांधी जी ने कहा कि वह इस बात के लिये भी तैयार हैं कि कांग्रेस के संचालन का उत्तरदायित्व सोशलिस्ट पार्टी को सौंप दिया जाये, यदि उसके लिये आवश्यक हो तो वे कांग्रेस की वर्किंग कमेटी के सदस्यों से इस्तीफा दिलवाकर कांग्रेस सोशलिस्टों द्वारा कांग्रेस के संचालन का भार वहन करने के लिए वह मार्ग भी प्रशस्त कर सकते हैं। इस पर आचार्य जी ने गांधी जी से कहा ''समाजवादी लोग कांग्रेस में अल्पसंख्या में हैं, इसलिए वे कांग्रेस चलाने का दावा नहीं कर सकते। वे केवल यही चाहते हैं कि उन्हें उसी स्वतन्त्रता के साथ काम करने का अधिकार और अवसर मिले जो किसी भी संस्था के अल्पसंख्यकों को मिला करता है।''

पटना के पश्चात् कांग्रेस समाजवादियों का दूसरा सम्मेलन अक्टूबर के महीने में सन् 1934 में बम्बई में उस समय हुआ जब डा. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में बम्बई में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था। डा. सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में हुए इस सम्मेलन में नवनिर्मित पार्टी को ''कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी'' की संज्ञा दी गयी और निश्चय किया गया कि उसके उद्देश्यों में विश्वास रखने वाले कांग्रेस सदस्यों को भी उसका सदस्य बनाया जाए। अपना नामकरण संस्करण करने के अतिरिक्त उस सम्मेलन में अपने को सार्थक सिद्ध करने के लिये निम्नोक्त छह सूत्री कार्यक्रम निर्धारित किया (1) कांग्रेस के अन्दर समाजवादी पार्टी के उद्देश्य और कार्यक्रम को स्वीकार करने का यत्न करना (2) किसान और मजदूरों को संगठित करना, उनमें वर्ग-संघर्ष की भावना पैदा कर उनके आर्थिक संघर्षों को तेज करना और जहाँ ऐसे संगठन हो उनमें शामिल होना (3) युवक संघ महिला संघ, स्वयंसेवक संघ आदि संगठनों में प्रवेश करना, उन्हें संगठित करना और समाजवादी विचारधारा के रंग में रंगना, (4) साम्राज्यवादी युद्धों के विरुद्ध चलने वाले स्वतन्त्रता संग्राम को मजबूत करने में अपनी शक्ति को लगाना (5) ब्रिटिश सरकार से किसी भी प्रकार से तथा किसी भी स्थिति में वैधानिक समझौता न करना तथा (6) सत्तारूढ़ होने पर मजदूरों, किसानों और अन्य शोषित वर्गों की समितियों द्वारा चुने हुये प्रतिनिधियों की संविधान सभा आयोजित कर संविधान बनाना।

जिस समय बम्बई मे सम्मेलन हो रहा था उस समय 1935 का प्रस्तावित भारतीय शासन विधान ब्रिटिश ससद के सदनो में विधेयक के रूप मे चर्चाओ की निहाइ पर था। यद्यपि उस समय तक यह अधिनियम नहीं बना था, किन्तु उसकी मूल बाते भारतवासियो को ज्ञात हो गयी थीं। अत उस समय बम्बई मे क्या काग्रेसी, क्या काग्रेस–समाजवादी सभी ने यह निश्चय किया कि यदि सन् 1919 के भारत शासन विधान के अन्तर्गत कुछ ही महीनो बाद केन्द्रीय विधानसभा का चुनाव होता है तो उस निर्वाचन मे काग्रेस भाग लेगी। यहाँ यह स्मरणीय है कि केन्द्रीय विधानसभा 14 अगस्त, 1937 तक उसी भारत शासन विधान के प्राविधानो के अन्तर्गत चलती रही जिसके अन्तर्गत सन् 1920 मे उसका प्रादुर्भाव हुआ था। सन् 1935 के प्रारम्भ होते ही केन्द्र की नवनिर्वाचित विधानसभा ने स्वरूप ग्रहण किया और मई 1935 के समाप्त होते ही, जून के प्रथम सप्ताह में 1935 का भारत शासन विधान ब्रिटिश पार्लियामेण्ट द्वारा निर्मित एक कानून बन गया।

इस प्रकार जून 1935 के प्रथम सप्ताह मे जहाँ सन् 1935 का भारत शासन विधान जनता के सामने आया, वहीं उसी जून माह के अन्त मे काग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की गुजरात शाखा का सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप मे अपने भाषण मे आचार्य जी ने नये शासन विधान पर तीखी प्रतिक्रिया प्रकट की। अत भारतवर्ष के अन्य राष्ट्रीय नेताओ की अपेक्षा आचार्य जी को सन् 1935 के भारत शासन विधान के सम्बन्ध मे अपने विचारो को सबसे पहले व्यक्त करने का अवसर मिला। नरेन्द्र देव जी द्वारा की गई मीमासा के अनुसार वह शासन विधान प्रतिक्रियावादी तथा स्थाई स्वार्थों का सरक्षक होने के कारण तिरस्कार का पात्र था। उनके मतानुसार, विधान मडलो में प्रवेश कर भारतीयो को उसका प्रतिरोध करना था तथा उसे निरर्थक सिद्ध करना था, क्योंकि भारत को तो स्वतत्र और समाजवादी सविधान चाहिए था। आचार्य जी का कहना था कि देश को समस्यामूलक और विभाजक शासन विधान नहीं चाहिए था जैसा कि 1935 का विधान था। पटना मे काग्रेस समाजवादी दल के जन्म लेने के दो वर्षों के बाद लखनऊ मे जवाहरलाल जी की अध्यक्षता मे इडियन नेशनल काग्रेस का अधिवेशन अप्रैल, 1936 मे हुआ। इस अधिवेशन में काग्रेस की सर्वोच्च संस्था-काग्रेस की वर्किंग कमेटी मे काग्रेस समाजवादी दल के प्रतिनिधियो के रूप मे आचार्य नरेन्द्र देव को तथा उनके साथ श्री जयप्रकाश नारायण और श्री अच्युत पटवर्द्धन को सम्मानपूर्ण स्थान मिला। तत्कालीन काग्रेस अध्यक्ष जवाहर लाल जी द्वारा 16 अप्रैल 1936 को आचार्य नरेन्द्र देव जयप्रकाश नारायण तथा अच्युत पटवर्द्धन काग्रेस की कार्य समिति के सदस्य घोषित हुये थे। इस प्रकार वर्ष 1936 आचार्य जी के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण वर्ष रहा। सन 1936 का अन्त होते-होते वह बरेली मे यू.पी. कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष हो गये और उनकी ही अध्यक्षता में 1937 के जनवरी-फरवरी मे होने वाले विधानसभा के चुनावों मे पार्टी की रणनीति बनी।



लखनऊ कांग्रेस और नरेन्द्र देव

सन1936 के अप्रैल मास में कांग्रेस का अधिवेशन लखनऊ में प. जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता मे हुआ। आचार्य नरेन्द्र देव 16 अप्रैल 1936 को जय प्रकाश जी व श्री अच्युत पटवर्धन के साथ कांग्रेस की वर्किंग कमेटी म सम्मिलित किये गये। इस तरह लखनऊ कांग्रेस ने आचार्य नरेन्द्र देव को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का सदस्य बना कर राष्ट्रीय स्तर का एक नेता बना दिया। यहाँ यह याद रखने की बात है कि आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के अन्दर पटना म उनका पहला भाषण मई 1934 मे हुआ था। अपने पहले भाषण के दो ही वर्ष क अन्दर इनको कांग्रेस कार्यकारिणी मे सम्मिलित कर लिया जाना उनके व्यक्तित्व की उस गरिमा का प्रतीक है जो कांग्रेस सगठन की दृष्टि मे उन्हे अपने प्रथम भाषण के दो ही वर्षों के अन्दर प्राप्त हो गयी थी। उनके कांग्रेस कार्यकारिणी का सदस्य होने के सात महीने बाद प्रान्तीय कांग्रेस का सम्मेलन नवम्बर 1936 म बरेली मे हुआ, जहाँ आचार्य जी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की अध्यक्षता का ताज श्री रफी अहमद किदवई से ग्रहण कर सयुक्त प्रान्तीय कमेटी के अध्यक्ष हुए।

प्रीमियर पंत जी क्यो हुए

सन 1936 के दिसम्बर मास तथा सन 1937 के जनवरी मास के मध्य की अवधि मे प्रान्तीय विधान सभा तथा विधान परिषदो का जो चुनाव हुआ वह उत्तर प्रदश मे आचार्य जी के ही नेतृत्व मे लड़ा गया। उस निर्वाचन मे सयुक्त प्रान्तीय कांग्रेस को विधान सभा मे प्रबल बहुमत मिला। इस नाते सन 1935 के भारतीय शासन विधान के अन्तर्गत वह सयुक्त प्रान्त मे सरकार बनाने की अधिकारिणी हो गयी। देश के अन्य प्रान्तो मे भी कांग्रेस को इसी प्रकार की सफलता मिली थी। इसलिये कांग्रेस के लिये यह आवश्यक हो गया कि कांग्रेस बहुल विधान सभा वाले सभी प्रान्तो मे सरकार बनाने की नीति तथा सिद्धान्त के निर्धारण के लिये 5 मार्च 1937 को दिल्ली मे आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी तथा कांग्रेस कार्यकारिणी समिति की बैठकें बुलाये तथा साथ ही भारतवर्ष के कांग्रेसी विधायको का भी वहाँ सम्मेलन कर। उन सम्मेलनो मे विचार मन्थन के बाद जो अनेक निर्णय हुए उनमे यह निर्णय भी था कि शासन की म श्री लोग जो प्रान्तीय कांग्रेस

दायित्व आचार्य नरेन्द्र देव के कधो को सम्भालना था। किन्तु ऐसा होता कैसे? कांग्रेस समाजवादी पार्टी उन्हे रोकने के लिए अपना सकल्प लिखे खडी थी। उक्त सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि सन् 1936 के दिसम्बर मास मे जब विधान सभा की सदस्यता के लिए नामजदगी के पर्चे दाखिल हो रहे थे, उस समय जवाहर लाल जी ने यह कहकर राजर्षि पुरूषोत्तमदास टण्डन की नामजदगी का पर्चा दाखिल कराया था कि निर्वाचित होने पर उन्हे ही कांग्रेस दल का नेता होना है। जैसा कि श्री चन्द्र भानु गुप्त की 60वी वर्षगांठ के अवसर पर उनको समर्पित अभिनन्द ग्रन्थ कहता है तथा जैसा ' स्वतन्त्र भारत'' के पूर्व सम्पादक श्री चन्द्रोदय दीक्षित का कहना है, टण्डन जी ने जवाहर लाल जी द्वारा दिये गये आश्वासन पर ही विधान सभा की सदस्यता के लिए कांग्रेस का अभ्यर्थी बनना स्वीकार किया था। टण्डन जी विजयी हुए और कांग्रेस ने बहुमत भी पाया अत टण्डन जी मे इस आशा का संचार स्वाभाविक था कि कांग्रेस द्वारा सरकार बनाये जाने पर व उत्तर प्रदेश के प्रीमियर होगे। किन्तु कांग्रेस के दिल्ली के कन्वेशन के इस निर्णय ने कि जो भी प्रान्त का अध्यक्ष होगा वही कांग्रेस की ओर से प्रान्त की सरकार बनायेगा, टण्डन जी के दावे की इतिश्री कर दी। कांग्रेस के उपर्युक्त निर्णय के अनुसार इस दायित्व का निर्वहन आचार्य जी को करना था। किन्तु आचार्य नरेन्द्र देव जी ने स्वय उस दायित्व को स्वीकार न कर, उस पद के लिए प गोविन्द बल्लभ पन्त का नाम प्रस्तुत किया और सम्पूर्णानन्द जी ने उसका समर्थन किया। गुप्त जी को समर्पित अभिनन्दन ग्रन्थ के अनुसार, इस प्रकार 23 मार्च, 1937 को टण्डन जी का कांग्रेस विधान मण्डल दल का नेता निर्वाचित न होना प जवाहर लाल नेहरू को अच्छा न लगा था किन्तु वह कुछ न कर सके।

आखिरकार, पन्त जी कांग्रेस दल के नेता निर्वाचित हो गये। पन्त जी के इस प्रकार नेता निर्वाचित होकर प्रीमियर बनने की बात को लेकर विभिन्न लेखको ने विभिन्न प्रकार की बाते कही हैं। कुछ लेखको का कहना है कि आचार्य जी और उनकी कांग्रेस समाजवादी पार्टी को यह स्वीकार न था कि कांग्रेस दल सरकार बनाये और उसकी पार्टी का नेता प्रीमियर हो, और इसलिए आचार्य नरेन्द्र देव ने स्वय प्रीमियर होना अस्वीकार कर दिया। किन्तु यहाँ विचारणीय प्रश्न यह है कि फिर आचार्य जी ने यह प्रस्ताव क्यो किया कि पं गोविन्द बल्लभ पंत प्रीमियर बनकर सरकार बनाये। इसका उत्तर केवल यही हो सकता है कि सयुक्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष होने के नाते उन्हे सोशलिस्ट पार्टी के अनुशासन की तुलना मे कांग्रेस के अनुशासन को अधिक वजन देता था।

प जवाहर लाल नेहरू का भी दिल्ली-निर्णय के पूर्व वही विचार था जो नरेन्द्र देव जी का था, और इन लोगों का ऐसा मत था कि कांग्रेस का व्यक्ति न प्रीमियर बने और न सरकार बनाये। किन्तु बाद मे फिर नेहरू जी ने ही मन्त्रिमण्डल मे

[illegible] समय नेहरू जी ने अपना यही मत प्रकट किया था कि कुछ भी हो कांग्रेस कभी कोई [illegible] नहीं कर सकती। टण्डन जी ने [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। इस बात की [illegible] [illegible] [illegible] आचार्य जी ने अपने आचरण से पुष्टि की।

पण्डित प्यारे लाल शर्मा के त्याग पत्र से जनवरी 1937 में रिक्त हुए स्थान की पूर्ति के लिए डा. सम्पूर्णानन्द को 2 मार्च 1938 को शिक्षा मन्त्री बनाया गया। सम्पूर्णानन्द जी के मन्त्रिपद स्वीकार करने पर समाजवादियों ने उनकी बड़ी आलोचना की थी। यह अनुचित था क्योंकि महाकवि बिहारी के वाङ्मय के अनुसार डा. सम्पूर्णानन्द ''बूड़े बड़े हजार'' में थे तो पं. जवाहर लाल तथा आचार्य नरेन्द्र देव भी उस राजमद से ''अनबूड़े न रहे।'' सन 1937 के नवम्बर महीने में कांग्रेस का प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन जब फैजाबाद में हुआ पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने संयुक्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष-पद ग्रहण किया। तब आचार्य नरेन्द्र देव जी उसके बोझ से मुक्त हो कांग्रेस समाजवादी पार्टी के कार्यकलाप की ओर अधिक ध्यान देने की स्वतन्त्रता तथा समय पा गये।



कांग्रेस के नेतृत्व में वर्चस्व

सन् 1936 के बाद संयुक्त प्रान्तीय उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी मे आचार्य नरेन्द्र देव का प्रभाव बढ़ता ही गया। प्रान्तीय कांग्रेस मे रफी अहमद किदवई नरेन्द्र देव जी के प्रमुख प्रतिद्वन्दी थे। इस प्रतिद्वन्दिता ने प्रान्तव्यापी गुटबंदी का रूप धारण कर लिया था। सर्वश्री दामोदर स्वरूप सेठ और चन्द्र भानु गुप्त को नरेन्द्र देव जी के गुट में विशेष स्थान प्राप्त था। विचारो मे काफी विरोध होते हुए भी नरेन्द्र देव जी और रफी अहमद किदवई एक दूसरे की बड़ी इज्जत करते थे। त्रिलोकी सिंह जी का कहना था कि सन् 1947 मे रफी साहब ने गाधी जी के इस विचार का समर्थन किया कि नरेन्द्र देव को कांग्रेस का अध्यक्ष बनाया जाय।

सितम्बर 1939 मे विश्व युद्ध शुरू हुआ। नरेन्द्र देव जी ने माग की कि यदि इगलिस्तान युद्ध मे भारत का सहयोग चाहता है तो वह हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता घोषित करे, कांग्रेस ने भी इस माग को दोहराया। पर सरकार ने दोनो मे से किसी की बात नही मानी। विवश होकर कांग्रेस मन्त्रिमण्डलो ने त्यागपत्र दे दिये। सहयोग के कदम अब असहयोगोन्मुख हो गये। 23 नवम्बर, 1939 को कांग्रेस की वर्किंग कमेटी ने घोषित किया कि "कांग्रेस मन्त्रिमण्डलो का पदत्याग असहयोग की नीति का पहला कदम है और यह नीति उस समय तक बनी रहेगी जब तक सरकार अपनी नीति को बदल कर कांग्रेस की मांग को स्वीकार नहीं करेगी।"

22 दिसम्बर, 1939 को कांग्रेस की कार्य समिति ने देशवासियो से आगामी 26 जनवरी, 1940 को यह सकल्प लेने का आह्वान किया कि वे अहिंसात्मक तरीके से आजादी की लड़ाई जारी रखेंगे और कांग्रेस के सिद्धान्तो और नीतियो का कड़ाई के साथ पालन करेंगे। 29 फरवरी 1940 को कांग्रेस की कार्य समिति ने घोषणा की कि पूर्ण स्वतन्त्रता से कम कोई भी चीज हिन्दुस्तान को मजूर नही होगी। मार्च 1940 को रामगढ मे कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन मे कांग्रेस ने गाधी जी को सघर्ष आरभ करने का अधिकार प्रदान किया।

श्री सुभाष चन्द्र बोस इन घोषणाओ से सन्तुष्ट न थे। सुभाष बाबू के विचार मे सविनय अवज्ञा की तैयारी करने मे खादी पर जोर देना व्यर्थ था। उन्होने कांग्रेस के

अधिवेशन के अवसर पर रामगढ़ के पास किसान नगर में समझौता-विरोधी सम्मेलन किया क्योंकि इन्हें भय था कि कहीं लोग सरकार से समझौता न कर लें। नरेन्द्र देव जी का स्वास्थ्य ठीक न रहा और वह समझौता विरोधी सम्मेलन में सम्मिलित न हुए। इस अवसर पर 'भारतीय संघर्ष' शीर्षक एक लेख लिखकर नरेन्द्र देव जी ने साम्राज्य विरोधी संघर्ष के लिए कांग्रेस की एकता को सुदृढ़ करने पर बल दिया। समझौता-विरोधी सम्मेलन द्वारा गठित 'युद्ध समिति' कोई कार्य न कर सकी। 2 जुलाई 1940 को श्री सुभाष चन्द्र बोस सरकार द्वारा नजरबन्द कर दिये गये।

1940 की प्रथम जुलाई को कांग्रेस की वर्किंग कमेटी तथा गांधी जी के बीच अहिंसा के प्रश्न पर गहरा मतभेद हो गया। गांधी जी चाहते थे कि अहिंसा के सिद्धान्त का विस्तार कर बाह्य आक्रमण से देश की रक्षा के लिए भी सेना का उपयोग न किया जाय। कांग्रेस की वर्किंग कमेटी ने यह तो माना कि देश की स्वतन्त्रता की लड़ाई अहिंसात्मक विधि से लड़ी जाय किन्तु बाह्य आक्रमण के समय भी सेना का प्रयोग न हो यह वचन देने के लिए वह तैयार न था। अतः कांग्रेस कार्य समिति ने जून 1940 में आन्दोलन के नेतृत्व के उत्तरदायित्व से गांधी जी को मुक्त कर दिया।

8 अगस्त 1940 को गवर्नर जनरल ने अपनी कार्यपालिका की शक्ति बढ़ाने के उद्देश्य से 'युद्ध परामर्श दात्री कौंसिल' की स्थापना की उसके साथ ही युद्धोपरान्त नये संविधान के बनाने के लिये एक सभा बुलाने की अनुमति देने की घोषणा भी की। वाइसराय की इस घोषणा से उत्पन्न राजनीतिक परिस्थिति पर कांग्रेस कार्य समिति द्वारा 15 सितम्बर, 1940 को लिये गये निर्णय के कारण अक्टूबर सन 1940 में गांधी जी द्वारा भाषण की स्वतंत्रता के निमित्त व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ करने की घोषणा का मार्ग प्रशस्त हो गया। इस व्यक्तिगत सत्याग्रह का आरम्भ भी 17 अक्टूबर से हुआ। गांधी जी द्वारा व्यक्तिगत सत्याग्रह के श्रीगणेश से वामपक्षीय लोग सन्तुष्ट न थे। नरेन्द्र देव जी भी इस विषय में गांधी जी के साथ न थे। व्यक्तिगत सत्याग्रह के स्थान पर नरेन्द्र देव जी जन सत्याग्रह के पक्ष में थे। फिर भी गांधी जी के आन्दोलन में जिस रूप में गांधी जी उसे चलाते सम्मिलित होने को तैयार थे। जब गांधी जी का व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ हुआ नरेन्द्र देव जी स्वयं उस आन्दोलन में सम्मिलित हुए तथा कई महीनों तक उसके सिलसिले में उन्होंने लखनऊ, गोरखपुर तथा आगरा जेल में यातनाएं सहीं। वहाँ उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया और वह इतने कमजोर और अस्वस्थ हो गये थे कि उन्हें कुर्सी पर बैठाकर एक जगह से दूसरी जगह ले जाना पड़ता था।

गाँधी जी से निकट सम्पर्क और अगस्त क्रान्ति

विश्व युद्ध से शक्ति-संतुलन में बदलाव आया, और रूस अंग्रेजों के साथ हो गया। अंग्रेजों के रूस के साथ हो जाने से भारतीय कम्युनिस्टों के लिए साम्राज्यवादी युद्ध "जनयुद्ध" हो गया और वे युद्ध में अंग्रेजों की सहायता करने के समर्थक बन गये। पूर्व एशिया में एक के बाद दूसरे देश पर जापान की विजय हो जाने के कारण श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य भारतवर्ष पर जापान के आक्रमण की आशंका करने लगे थे। जवाहर लाल नेहरू परेशान थे, क्योंकि उस युद्ध में अंग्रेजों की पराजय में वह फासिस्टवाद की विजय की गंध पा रहे थे और अंग्रेजों को उस युद्ध में पराजित होते वह नहीं देखना चाहते थे। दूसरी ओर, नेहरू जी किसी भी कीमत पर पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति के प्रश्न पर अंग्रेजों से कोई समझौता नहीं करना चाहते थे। आचार्य नरेन्द्र देव तथा कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के नेता भी उस समय पूर्ण स्वराज्य के लिए साम्राज्यशाही के विरुद्ध देशव्यापी संघर्ष छेड़े जाने के पक्षधर थे।

जिस समय गांधी जी देशव्यापी जनसंघर्ष शुरू करने की योजना बना रहे थे उस समय आचार्य नरेन्द्र देव गांधी जी की देख-रेख में सेवाग्राम आश्रम में इलाज करा रहे थे। नरेन्द्र देव जी की चिकित्सा गांधी जी के सेवाग्राम वाले आश्रम में इस प्रकार चार महीने तक चलती रही। गांधी जी चार महीने तक उनका इलाज करते रहे। बीमार नरेन्द्र देव चिकित्सक गांधी से चिकित्सा कराते-कराते इस तरह गांधी जी के बहुत निकट पहुंच गये थे। उन्हीं दिनों समय-समय पर होने वाली चर्चा के मध्य गांधी जी ने नरेन्द्र देव जी से स्वराज्य की समाजवादी कल्पना को समझने की चेष्टा की। इस विषय को लेकर दोनों व्यक्तियों के बीच होने वाली चर्चा में समय-समय पर सत्य और अहिंसा के सिद्धान्तों की समीक्षा भी होती रही। गांधी जी को अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए आचार्य जी ने उस समय बताया था कि "सत्य" की साधना तो वह बचपन से करते रहे हैं, पर अन्याय के विरुद्ध हिंसा के प्रयोग को उचित मानते हैं। आचार्य जी ने गांधी जी को विश्वास दिलाया कि जन संघर्ष शुरू होने पर वह और उनकी पार्टी उनके साथ रहेंगे। उन्हीं दिनों नरेन्द्र देव जी ने

समाचार-पत्रों में एक लेख लिखा था जिसका आशय यह था कि [illegible] होगा कि ब्रिटेन से मैत्री हो जाने के कारण [illegible] और [illegible] के बीच छिड़ा युद्ध साम्राज्यवादी युद्ध से जनवादी युद्ध बन गया। आचार्य नरेन्द्र [illegible] को [illegible] की घोषणा और नीयत पर कोई विश्वास न [illegible]। [illegible] जापान भारत पर हमला करे तो जनता में आक्रामक जापान के प्रति [illegible] की भावना जाग्रत की जाय। मार्च 1942 में जब सर स्टैफर्ड क्रिप्स हिन्दुस्तान आये उस समय नरेन्द्र देव जी सेवाग्राम आश्रम में अपना इलाज करा रहे थे। सर स्टैफर्ड क्रिप्स के खाली हाथ लौट जाने के बाद 27 अप्रैल 1942 को प्रयाग में कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठक हुई। इस बैठक में गांधी जी की अनुपस्थिति में "भारत छोड़ो" प्रस्ताव पर विचार किया गया, पं. जवाहर लाल नेहरू ने इस प्रस्ताव का डटकर विरोध किया। पं. नेहरू से अच्युत पटवर्धन तथा आचार्य नरेन्द्र देव जी ने जो उस समय वर्किंग कमेटी में विशिष्ट आमंत्रितों के रूप में उपस्थित थे जोरदार शब्दों में मोर्चा लिया। सर्वश्री गोविन्द बल्लभ पंत, भूला भाई देसाई और आसफ अली उस बैठक में नेहरू जी के समर्थक थे। कांग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजाद के अनुरोध पर वर्किंग कमेटी ने पं. नेहरू द्वारा रखे गये विचार को स्वीकार किया। गांधी जी नेहरू जी के विचार और दृष्टिकोण से असन्तुष्ट थे, लगभग ढाई महीने बाद 6 जुलाई 1942 कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठक वर्धा में आहूत की गई। यह बैठक 24 जुलाई तक चलती रही। इलाहाबाद में वर्किंग कमेटी ने जिस "भारत छोड़ो" प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया था वर्धा में उसे पुनः स्वीकार किया और उसकी पुष्टि के लिए उसने बम्बई में आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक बुलाई। यह बैठक 7-8 अगस्त 1942 को हुई जब कांग्रेस का "भारत छोड़ो" संकल्प देश के सामने आया। 10 अगस्त को प्रातः तीन-चार कांग्रेस कार्यकारिणी के सभी सदस्य गिरफ्तार होकर अहमदनगर किले की जेल में पहुँचाये गये, और गांधी जी को आगा खाँ पैलेस में ले जाकर नजरबन्द कर दिया गया। अहमदनगर किले की जेल में कांग्रेस वर्किंग कमेटी के अन्य सदस्यों के साथ आचार्य नरेन्द्र देव 10 अगस्त 1942 से लेकर 28 मार्च 1945 तक रहे। उन्होंने वहां अपने बंदी साथियों के साथ जिनमें वल्लभ भाई पटेल तथा जवाहर लाल नेहरू भी थे एक काफी क्लब स्थापित किया था, उस काफी क्लब का ध्यान रखते हुए आचार्य नरेन्द्र देव जी ने एक लेख लिखा जो अभी भी अप्रकाशित है। सन् 1942 का "भारत छोड़ो" संघर्ष जिसने आचार्य जी व अन्य नेताओं को अहमदनगर किले की जेल में पहुँचाया था आजादी के पूर्व सभी संघर्षों से अधिक भीषण था।

मई 1945 में जर्मनी ने हार मानकर हथियार डाल दिये और 14 जून 1945 को भारत के तत्कालीन वाइसराय लार्ड वेवेल ने घोषणा की कि अन्तरिम सरकार

बनाने के सम्बन्ध मे 25 जून 1945 को कांग्रेस वर्किंग कमेटी के सभी सदस्य तथा जेलो से बंद आचार्य नरेन्द्र देव आदि दूसरे प्रमुख नेता छोड दिये गये। उन लोगो के छूटने के कुछ ही दिनो बाद 14 जुलाई को वाइसराय ने घोषणा कर दी कि शिमला मे उनके द्वारा बुलाया गया सम्मेलन अपना उद्देश्य सिद्ध करने मे विफल रहा। वाइसराय की उक्त घोषणा के 10 दिन पूर्व 4 जुलाई को ब्रिटेन मे पार्लियामेन्ट का चुनाव हुआ था। चुनाव मे चर्चिल की कंजर्वेटिव पार्टी की वह सरकार पराप्त हो चुकी थी जिसके निर्देश पर शिमला सम्मेलन बुलाया गया था। 8 जुलाई को श्री क्लीमेण्ट एटली के नेतृत्व मे ब्रिटेन मे लेबर पार्टी की सरकार बनी। इधर भारत मे शिमला सम्मेलन के बाद जुलाई के महीने मे ही वाइसराय ने घोषणा की कि वर्ष 1946 के जाडे मे प्रान्तीय और केन्द्रीय विधान सभा के चुनाव होग। सितम्बर 1946 मे वाइसराय ने ब्रिटिश सरकार की ओर से घोषित किया कि सरकार का इरादा है कि यथाशीघ्र एक संविधान निर्मात्री सभा का आयोजन किया जाय तथा चुनाव समाप्त होने के बाद प्रान्तीय विधान सभाओ के सदस्यो से इस सम्बन्ध मे बातचीत की जाय कि सन 1942 की क्रिप्स योजना उन्हे मान्य है अथवा वे किसी दूसरी योजना को उचित समझते है। यह भी कहा गया था कि संविधान निर्मात्री सभा मे भाग लेने के संबध मे भारतीय रियासतो के प्रतिनिधियो से भी बात की जायेगी। उन्होने घोषित किया कि "सम्राट की सरकार उस संधि के विषय पर भी विचार कर रही है जिसका ब्रिटेन और भारत के बीच मे होना आवश्यक है।" वाइसराय की यह घोषणा कांग्रेस की दृष्टि मे अनिश्चित अपर्याप्त और असन्तोषप्रद थी।

प्रान्तीय विधान मण्डलो तथा केन्द्रीय विधान मण्डल के चुनाव सन 1946 मे यथाशीघ्र हुए। इन चुनावो मे कांग्रेस को भारी सफलता मिली। सन 1937 मे हुए चुनाव की तरह सन 1946 के चुनाव मे भी आचार्य नरेन्द्र देव ने फैजाबाद सीतापुर, बहराइच, अयोध्या गोण्डा की 5 नगरपालिकाओ के क्षेत्र से चुनाव लडा और विजयी होकर वह विधान सभा के सदस्य हुए। फरवरी, 1948 मे नरेन्द्र देव जी का एक लेख "जनता" नामक साप्ताहिक पत्र मे प्रकाशित हुआ। उस लेख मे उन्होने कहा था कि जहा व्यवहार सिद्धान्तविहीन और अस्तव्यस्त होता है वहा वह व्यवहारविहीन सैद्धान्तिक विचारधारा की महामारी पैदा करता है। उनके मतानुसार विचारो की सफाई व्यवहार से ही होती है और सजीव वास्तविकता से प्रभावित न होने पर विचार वस्तुत: गतिहीन हो जाते है।

जनवरी 1946 मे ब्रिटिश पार्लियामेंट के कतिपय सदस्यो का एक शिष्ट मंडल हिन्दुस्तान आया उसके कुछ दिनो बाद मार्च, 1946 मे तत्कालीन भारत मन्त्री लार्ड पैथिक लारेंस की अध्यक्षता मे भारत की राजनीतिक समस्या हल करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने एक कैबिनेट मिशन भारत भेजा। उसी कैबिनेट मिशन

की योजना के अन्तर्गत सन 1946 में अन्तरिम सरकार केन्द्र में बनी। इस सरकार के निर्माण को नरेन्द्र देव जी स्वराज्य का प्रारम्भ मानते थे, किन्तु इसे कोई क्रान्तिकारी कदम मानने को वह तैयार न थे। इसके बाद देश के बंटवारे की बात चल पड़ी और 3 जून 1947 को ब्रिटिश सरकार ने एक घोषणा में कहा कि 15 अगस्त को भारतवर्ष दो हिस्सों में बट जायेगा।

सन 1945 में जेल से छूटने के बाद आचार्य जी का "संघर्ष" नामक पत्रिका के प्रथम अंक में एक लेख छपा तथा इसके बाद के "विश्वमित्र" के नववर्ष अंक में एक अन्य लेख प्रकाशित हुआ। इन लेखों में यूरोप की तत्कालीन स्थिति पर तथा स्वतन्त्रता आन्दोलन की अवस्था पर नरेन्द्र देव जी के विचार उल्लिखित हैं। जून 1947 में उनका एक अन्य लेख प्रकाशित हुआ जो संयुक्त राज्य अमेरिका की वैदेशिक नीति के सम्बन्ध में था। उनका कहना था कि "इसमें सन्देह नहीं कि अमेरिका की नयी शती का आरम्भ हो गया है किन्तु उसकी यह शती संसार के कल्याण के लिए नहीं होगी। वस्तुतः अमेरिका के बढ़ते हुए प्रभाव से विश्व का अमंगल ही होगा।" उनको इस बात का दुख था कि अमेरिका यद्यपि लोकतान्त्रिक राष्ट्र होने का दावा करता था किन्तु वह सर्वत्र प्रतिक्रियावाद का ही समर्थन कर रहा था।

8 अगस्त 1946 को उत्तर प्रदेश विधान सभा में रफी अहमद किदवई ने जमींदारी उन्मूलन का एक संकल्प रखा। सन 1947 के मार्च महीने में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का अधिवेशन डा. राम मनोहर लोहिया की अध्यक्षता में हुआ और पार्टी का नया नामकरण किया गया। सन 1947 में आचार्य नरेन्द्र देव लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति हुए और उन्होंने आगरा विश्वविद्यालय में दीक्षान्त भाषण दिया। देश का संविधान बनाने के लिए जो संविधान सभा बनी, उसका सदस्य बनने से आचार्य जी ने इन्कार कर दिया। उनका कहना था कि वह ऐसी संविधान सभा में कभी भी सम्मिलित न होंगे, जो न तो जनता की आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करती हो और न स्वयं प्रभुता-सम्पन्न हो। इस प्रकार हमारा संविधान उनके विचार और दर्शन को ग्रहण करने से वंचित रह गया। आचार्य जी की देख-रेख में प्रो. मुकुट बिहारी लाल ने उनके विचारों की अभिव्यक्ति करते हुए स्वतन्त्र भारत का जो संविधान बनाया, वह मार्च 1948 में पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ। भारतीय संविधान के सम्बन्ध में सोशलिस्ट पार्टी के विचारों का सही अनुमान उस प्रस्ताव से लगाया जा सकता है जो उसने सन 1950 में अपने मद्रास सम्मेलन में इस सम्बन्ध में पारित किया था। संविधान की यह समीक्षा मद्रास सम्मेलन में स्वीकार की गयी। नरेन्द्र देव जी सम्मेलन में उपस्थित न थे पर उन्हें इस समीक्षा की सभी बातें मंजूर थीं।

वैचारिक पक्षधरता और दूरदृष्टि

23-24 जून 1935 को गुजरात की समाजवादी पार्टी शाखा के सम्मेलन के अध्यक्ष पद से आचार्य जी ने जो भाषण किया था वह अनेक दृष्टियो से उल्लेखनीय रहा है। उन्होने उसमे कहा था कि 1935 का भारतीय शासन विधान ऐसा बना है जिसमें चारो तरफ से कसकर इस देश को भली प्रकार जकड लिया गया था। आचार्य जी की दृष्टि मे उसे सविधान कहना सविधान का मजाक उडाना था। उस शासन विधान ने प्रान्त के विधान मण्डलो में द्विसदनीय सदन की व्यवस्था की थी। जिन प्रान्तो मे सामन्तशाही का जोर था उनमें विधान परिषदो की सृष्टि की गयी थी। इनके द्वारा धर्नी लोग उन विधेयको को जो उनके अपने हितो तथा साम्राज्य के हितो के प्रतिकूल हो, उनके पारण मे विलम्ब कर सकते थे अथवा उनका पुनरीक्षण कर सकते थे अथवा उनको पराजित कर सकते थे। दूसरे सदन यानी विधान परिषद ऊँची सम्पत्ति सम्बन्धी अर्हताओ अथवा सरकारी नौकरियो मे बडे स्थान की अर्हताओ पर आधारित थे। इसके अतिरिक्त सामान्तशाही वाणिज्य और उद्योग को पर्याप्त प्रतिनिधित्व देकर उन्हे सरक्षित किया गया था। आचार्य जी के मतानुसार 1935 के शासन विधान मे ऐसी एक भी योजना नही थी जिससे जनता के वास्तविक हितो की रक्षा होनी हो। आचार्य जी की दृष्टि मे भारतवर्ष चीन की तरह छोटे किसानो का देश है जो भारी कर्जों से लदे हुए है। जोतो के बटवारे कृषि के तकनीकी सुधार के साधनो व स्रोतो की अपरिपक्वता और कृषि उत्पादनो के मूल्यो मे असाधारण गिरावट से किसान पीडित है। लगान की ऊँची दरो तथा अन्य अतिरिक्त गैर कानूनी देयराशियो के कारण किसानो की दशा बहुत ही दयनीय हो जाती है। मध्यम वर्ग को भी निर्धन बनाया जा रहा है। मध्यम वर्ग के शिक्षित नवजवान नौकरी नही पा रहे हैं। उनके मत से इन सभी समस्याओ के मूल मे यह प्रचलित धारणा है कि दूसरो की सम्पत्ति न छुओ, क्योकि सम्पत्ति एक पवित्र संस्था है।

आचार्य जी के कथनानुसार वह सविधान एक मिथ्या सविधान था जो भारत मे ब्रिटिश वर्चस्व कायम रखने की दृष्टि से बनाया गया था। अत सविधान के अन्तर्गत म जो मत्रिपद या अन्य पद मिल रहे थे उनको किया

निलम्बन करने के लिए सरकार को मजबूर किया जा सकता था। नरेन्द्र देव जी को इस बात का खेद था कि कांग्रेस संसदीय दल की ओर से कुछ लोगों द्वारा इस बात का प्रचार किया जा रहा था कि वे सन 1935 के सुधारों को सफल बनाना चाहते है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सन 1935 मे रांची मे जब स्वराज्यपार्टी का पुनर्जन्म हुआ तो उसकी जो नीति और कार्यक्रम तय हुए वे सब सरकारी पदों की स्वीकृति के बारे मे मौन थे। आचार्य जी का कहना था कि भारतवर्ष की आजादी के साथ पूर्व के कई देशों की आजादी का प्रश्न जुड़ा हुआ था। मिस्र को पूरी तरह आजादी इसलिये नहीं मिली थी कि ब्रिटिश साम्राज्य सत्ता को स्वेज नहर पर नजर रखनी थी जो भारत वर्ष को पानी के रास्ते से ब्रिटेन को जोड़ता था। भारतवर्ष मे अपने हितों के रक्षा के लिए ही ब्रिटेन ने इराक मे हवाई अड्डा कायम कर रखा था। पूर्व के जो देश गुलाम थे वे यह नहीं जानते थे कि जिस दिन हिन्दुस्तान आजाद होगा उस दिन वे भी आजाद हो जायेंगे।

आचार्य नरेन्द्र देव जब कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के सूत्रधार बने उस समय उसके अनेक नेता साम्राज्यवाद के विरुद्ध समाजवादी शक्तियों के संयुक्त मोर्चे की सर्जना आवश्यक मानते थे। आचार्य नरेन्द्र देव तथा जयप्रकाश जी ऐसे लोगों मे प्रमुख थे। उनके प्रभाव मे जनवरी 1936 मे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी ने मेरठ के अपने अधिवेशन मे अपने को मार्क्सवादियों मे घोषित किया और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को सहयोग देने के लिए भी आमन्त्रित करना अनिवार्य माना। किन्तु कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की मेरठ मे जन्मी यह अभिलाषा कि कम्युनिस्ट पार्टी मतभेदों को भूलकर कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी को सुदृढ बनाये फलीभूत न हुई।

मार्च 1937 मे कम्युनिस्ट पार्टी के ''पोलित ब्यूरो'' का एक वक्तव्य प्रकाश मे आया, जिसमे समस्त भारतीय जनता से चंद प्रतिगामी तथा राजसत्ता भोगी तत्वों को छोड़कर एक संयुक्त राष्ट्रीय मोर्चा बनाने के लिए अनुरोध किया गया था। अपने पोलित ब्यूरो से संकेत पाकर देश भर में स्थान-स्थान पर कम्युनिस्ट पार्टी के लोग कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी तथा कांग्रेस संगठन मे प्रविष्ट होने लगे। सवश्री नम्बूदरीपाद ए के गोपालन पी सुन्दरैया पी राम मूर्ति जेड ए अहमद कुंवर मुहम्मद अशरफ सज्जाद जहीर सोली बाटलीवाला आदि कई चोटी के कम्युनिस्ट नेता कांग्रेस के अन्तर्गत बनी कांग्रेस समाजवादी पार्टी मे सम्मिलित हो गये। कांग्रेस पार्टी का अधिवेशन सन 1938 मे लाहौर मे हुआ। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी मे आते ही उस पर वर्चस्व स्थापित करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी के लोग मनसूबे बनाने लगे। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के लाहौर अधिवेशन मे उनकी योजना सर्वविदित हो गयी। किन्तु वे उसमे सफल न हुये। अपनी विवशता को राजनीतिक रूप देते हुए वे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का कायाकल्प कर उसे एक वामपंथी मोर्चे

का रूप देने में लग गया।

कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के लाहौर-अधिवेशन ने कम्युनिस्टों का सिद्धान्त-पत्र न स्वीकार कर अच्युत पटवर्धन का सिद्धान्त-पत्र स्वीकार किया। इसके फलस्वरूप उसे एक स्वतन्त्र पार्टी के रूप में कार्य करने का संकल्प लेना पड़ा। दोनों पक्षों के मध्य उभय सिद्धान्त-पत्रों को लेकर डटकर वाग्युद्ध हुआ। साथ ही आदिगीवालों के विरुद्ध कांग्रेस समाजवादी पार्टी को अनुशासन की कारवाई भी करनी पड़ी। अच्युत पटवर्धन की विचारधारा आचार्य जी को स्वीकार थी। उनका कहना था कि ' एक व्यक्ति दो दलों का सदस्य एक साथ नहीं हो सकता अर्थात वह एक ओर कम्युनिस्ट पार्टी का और दूसरी ओर कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का सदस्य एक साथ नहीं रह सकता। '

नरेन्द्र देव जी को वामपक्षीय एकता प्रिय थी किन्तु वामपक्षीय एकता के नाम पर साम्राज्यवाद विरोधी मोर्चे की एकता की बलि देने के लिए वे कदापि तैयार न थे। इस विषय में उन्हें न तो सुभाष चन्द्र बोस से बुराई लेने में कोई हिचकिचाहट थी और न सरदार बल्लभ भाई पटेल को नाराज करने में कोई घबराहट हुई। सन् 1939 में कांग्रेस के त्रिपुरी-अधिवेशन का अध्यक्ष बनने में उन्होंने श्री सुभाष चन्द्र बोस का गांधी जी की इच्छा के प्रतिकूल साथ दिया था। सुभाष चन्द्र बोस की कांग्रेस अध्यक्ष पद के उस निर्वाचन में लगभग 200 वोटों से विजय हुई थी। गांधी जी की इच्छा के विपरीत सुभाष बाबू की विजय पर कांग्रेस में भयंकर गतिरोध पैदा हो गया। आचार्य जी ने समझौते का प्रयास किया किन्तु उन्हें सफलता न मिली। कांग्रेस ने पन्त-प्रस्ताव स्वीकार कर गांधीवाद में अपनी आस्था को व्यक्त करने का निश्चय किया जिस पर आचार्य जी तथा उनके कांग्रेस समाजवादी साथी तटस्थ रहे। उस समय डा. राम मनोहर लोहिया का सर्वथा भिन्न रुख था। विवश हो सुभाष बाबू को कांग्रेस से त्याग पत्र दे कर पृथक होना पड़ा।

27 अप्रैल 1938 को नरेन्द्र देव जी ने यू.पी. समाजवादी कांग्रेस की अध्यक्षता की। आचार्य जी ने अपने उस अध्यक्षीय भाषण में लेनिन के विचारों को दोहराते हुए समाजवादियों को कांग्रेस के नेतृत्व में राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के लिए प्रेरित करते हुए उनसे राष्ट्रीय आन्दोलन में अपना वर्चस्व स्थापित करने का आह्वान किया। सोवियत रूस और कम्युनिस्टों की स्तालिनवादी नीति द्वारा भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन की आलोचना आचार्य जी को मार्क्सवाद के मूल सिद्धान्तों के प्रकाश में समीचीन न लगी। नरेन्द्र देव जी का उपर्युक्त दृष्टिकोण कम्युनिस्टों को स्वीकार न था। अतः कांग्रेस समाजवादी दल में दोनों के एक साथ होने पर वैचारिक मतभेद केवल बना ही न रहा, वरन कालान्तर में उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया।

मई-जून 1939 में नरेन्द्र देव ने [illegible] में [illegible] (उत्तर प्रदेश) में एक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया। [illegible] के प्रिंसिपल पंडित [illegible] थे। इस शिविर में लगभग 100 [illegible] और विद्यार्थियों ने मार्क्सवाद तथा दल की विभिन्न समस्याओं [illegible] अध्ययन किया। [illegible] उन विद्यार्थियों के साथ इस शिविर में वे भी कुछ दिन रहे [illegible] प्रोफेसर मुकुट बिहारी लाल जी ने किया था।

संघर्ष साप्ताहिक का प्रकाशन

समाजवादी विचारों और दृष्टिकोण का प्रचार-प्रसार करने के लिए तथा वामपक्षीय एकता को ठोस रूप देने के लिए नरेन्द्र देव जी ने अपने [illegible] लखनऊ से ''संघर्ष'' नाम से हिन्दी में साप्ताहिक पत्र का निकालना प्रारंभ किया था। किन्तु वामपक्षीय एकता का उनका प्रयास स्थायी रूप ग्रहण न कर सका।

जुलाई 1939 के प्रथम सप्ताह में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने निश्चय किया कि सम्बद्ध प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की पूर्व अनुमति के बिना कांग्रेसजन न तो सत्याग्रह करें और न उसके लिए संगठन बनायें। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों और कांग्रेस मंत्रिमण्डलों के पारस्परिक सहयोग करने पर जोर दिया था।



चिन्तन और विचार

नरेन्द्र देव जी के चिन्तन और व्यक्तित्व के विकास की पृष्ठभूमि में दो महत्वपूर्ण तत्व थे एक, महात्मा बुद्ध का उदाहरण दूसरा कार्ल मार्क्स के विचार। बुद्ध और मार्क्स दोनों ही सामाजिक क्रान्ति के प्रवर्तक थे। बुद्ध प्रत्येक मनुष्य को व्यक्तिगत रूप से बदलना चाहते थे जबकि मार्क्स मनुष्य को बदलने के बजाय पूरे समाज को बदलना चाहते थे। हाल के अनुभवों ने यह सिद्ध कर दिया है कि एक के बिना दूसरा अधूरा है। वैयक्तिक और सामाजिक दोनों स्तरों में परिवर्तन एक साथ होना चाहिये। नरेन्द्र देव जी ने इन दोनों के विचारों के तत्वों को ग्रहण किया था। उनके मत से कांग्रेस और किसान दोनों मिलकर देश में एकजुट साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन खड़ा कर सकते थे जिसकी रीढ़ किसानों को होना था।

आचार्य नरेन्द्र देव की चिन्तनधारा के सम्बन्ध में चन्द्रशेखर जी का कहना है- "आचार्य नरेन्द्र देव की मनीषा विश्लेषणात्मक थी। उन शक्तियों का उन्होंने विश्लेषण किया, जो समाज को आच्छन्न किये हुए थी। परिस्थितियों की समीचीनता ने उन्हें संघर्ष के मार्ग पर चलने के लिए बाध्य किया जिससे सामाजिक न्याय समानता तथा आर्थिक स्वतन्त्रता पर आधारित नयी सामाजिक व्यवस्था की संरचना हो सके।"

चन्द्रशेखर जी के अनुसार मनुष्य की समानता के सिद्धान्त में आचार्य जी के गहरे विश्वास ने उन्हें एक क्रियाशील समाजवादी बना दिया। वह न केवल पुराने अनुभवों के नये वैज्ञानिक निरूपण में विश्वास करते थे वरन सदा विश्व के सम-सामयिक अनुभवों से भी सीखने के लिए तैयार रहते थे। इसने उन्हें वह क्षमता दी, जिसके बल पर मार्क्सवाद तथा बौद्ध दर्शन के बीच समन्वय स्थापित करने में वह सफल हुए। वर्ग-संघर्ष को उन्होंने उसी रूप में स्वीकार किया जिस रूप में उसकी परिणति मार्क्स के द्वारा निरूपित थी किन्तु ऐसा करते समय उन्होंने मानव जीवन में बुद्ध द्वारा त नैतिकता को किया था

सामाजिक   करने की साधना करते रहे। एक समय [illegible] ने लिखा था कि "यह पर्याप्त नहीं कि हमने आजादी पा ली है वरन हमें क्रान्तिकारी आधार पर स्वतन्त्रता से लाभ भी उठाने हैं। हमारी सामाजिक संरचना का मूल्य आधार क्रान्ति है। मेरा तात्पर्य रक्तमय क्रान्ति से नहीं है। आवश्यक नहीं कि क्रान्ति में हिंसा हो, वह अहिंसात्मक भी हो सकती है।" चौथी बात यह थी कि वह भारतीय वर्ण-व्यवस्था के संकटपूर्ण परिणामों को भली प्रकार समझते थे। उनके लिए वर्ण-व्यवस्था हमारे समाज के वर्गों का द्वन्द्व था। अतः उनका विश्वास था कि वर्ण-व्यवस्था को वर्ग-संघर्ष का रूप देने का प्रभावी तथा नियोजित प्रयास किया जाय।

यहाँ यह स्मरणीय है कि मई 1947 में महात्मा गांधी ने अनेक कांग्रेसी व समाजवादी नेताओं से देश के विकास हेतु योजना बनाने के लिए विचार-विमर्श किया था। इससे यह बात स्पष्ट है कि गांधी जी नहीं चाहते थे कि समाजवादी लोग कांग्रेस छोड़ें। यही कारण है कि यदि समाजवादियों ने कांग्रेस छोड़ी तो गांधी की मृत्यु के बाद ही छोड़ी।

श्री ब्रह्मानन्द जी के अनुसार आचार्य कृपालानी जी ने जब कांग्रेस के अध्यक्ष-पद से त्यागपत्र दिया, उस समय गांधी जी का यह सुझाव था कि या तो आचार्य नरेन्द्र देव या श्री जयप्रकाश को कांग्रेस का अध्यक्ष निर्वाचित कर उक्त रिक्त स्थान की पूर्ति की जाय। प. जवाहर लाल पहले तो आचार्य नरेन्द्र देव के नाम पर सहमत हो गये थे परन्तु बाद में उन्होंने विचार बदल दिया और उस स्थान पर डा. राजेन्द्र प्रसाद का निर्वाचन हुआ।

समाजवादियों को कांग्रेस के बाहर निकालने की आवाज उठाने वालों में प्रमुख व्यक्ति श्री एन. वी. गाडगिल थे। उनका कहना था कि समाजवादियों को भी उसी प्रकार से बाहर निकाला जाय जैसे पहले उनको निकाला गया था। 1951 में लन्दन से प्रकाशित अपनी पुस्तक "लाइफ आफ महात्मा गांधी" के दूसरे खण्ड के पृष्ठ 239 पर अमरीकी लेखक लुई फिशर ने लिखा है कि 'गांधी जी को कांग्रेस की मशीन ने पराजित किया और कांग्रेस नेताओं ने उन्हें हराया था।'

स्वयं अपने संबंध में आचार्य नरेन्द्र देव का कहना है-"इलाहाबाद में मेरे विचारों ने परिपक्वता ग्रहण की और वहां मुझे जीवन का नया दृष्टिकोण मिला। . देश की राजनीतिक स्थिति त्वरता से बदल रही थी। राजनीतिक चित्रपट पर गांधी जी का उद्भव हो चुका था।"

नरेन्द्र देव जी युग-परिवर्तनकारी घटनाओं से प्रभावित हुए बिना कैसे रह

सकन थे। इन घटनाओं के प्रति उनके अन्दर उत्प्रेरणा का प्रादुर्भाव स्वाभाविक था। नरेन्द्र देव जी ने कांग्रेस के सामाजिक आधार को विस्तृत करने के लिए छात्र किसानो श्रमिको देहात के छोटे कारीगरो आदि को सगठन मे सम्मिलित करने की वकालत की। उन्हे मार्क्स के वर्ग-सघर्ष के सिद्धान्त पर विश्वास था। फिर भी भारतीय समस्याओं के अपने अनुभव के आधार पर वह निम्नाकित बाते चाहते थे -(1) एक आर्थिक कार्यक्रम की स्वीकृति (2) क्रान्तिकारी नेतृत्व तथा (3) वर्गीय सगठनो का निर्माण।

डा जाकिर हुसैन सुभाष बाबू तथा जवाहर लाल नेहरू ने जो इण्डिपेडस आफ इण्डिया लीग बनाई थी उसका उद्देश्य देश को पूर्ण स्वतन्त्रता दिलाने के लिए प्रचार और कार्य करना था। नरेन्द्र देव जी उस लीग की यू पी शाखा के नेता थे। 9 फरवरी 1929 को इस लीग के बारे मे नरेन्द्र देव जी ने जवाहर लाल जी को एक पत्र लिखा, जिसमे उन्होंने कहा था ''जब तक हम उन सामाजिक और आर्थिक सिद्धान्तो के बारे मे स्पष्ट नही होते जिनके आधार पर हमे आजाद हिन्दुस्तान का समाज बनाना है और जब तक हमें इस बात का विश्वास नही होता कि हमारे प्रयास का कोई परिणाम निकलेगा तब तक यह सब व्यर्थ है।''

यूरोपीय राष्ट्रीयता और भारतीय राष्ट्रीयता के बीच नरेन्द्र देव जी अन्तर मानते थे। उनका कहना था कि यूरोप की राष्ट्रीयता का जन्म औद्योगीकरण से हुआ है किन्तु भारतीय राष्ट्रीयता का जन्म जनता के सामन्ती शोषण और विदेशी शासन की लूट पर आधारित उस समाज के मध्य हुआ है जिसमे देशी नरेश सामन्त पूजीपति, नौकरशाह आदि वर्ग पनपे हैं। इस प्रकार भारतवर्ष मे ब्रिटिश साम्राज्यवाद से लडने के लिए और गुलामी की जजीरो को तोडने के लिए राष्ट्रीयता का जन्म हुआ है। इस समाज के लिए आर्थिक स्वतन्त्रता उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि राजनीतिक स्वतन्त्रता । 23 जून, 1935 को गुजरात मे सोशलिस्ट सम्मेलन मे अपने भाषण मे आचार्य जी ने कहा था 'भारत मे देशी नरेशो सामन्तो और पूजीपतियो को लेकर प्रतिक्रियावादी शक्तियों ने जो मोर्चा बनाया है उसके मुकाबले में हमे मध्यम वर्ग, मजदूरो तथा किसानो का एक सयुक्त मोर्चा खडा करना है।'

नरेन्द्र देव जी रचनात्मक और सरक्षणात्मक अर्थात 'पाजिटिव (सकरात्मक) राज्य' तथा 'पुलिस राज्य' के बीच अन्तर मानते थे। अतएव उनका सुझाव था कि कानून और व्यवस्था की समस्या को हल करने के लिए पुलिस को पाजिटिव राज्य मे बदला जाना चाहिए। कानपुर मे समाज-विज्ञान पर बोलते हुए उन्होने कहा था कि, ''विज्ञान के युग ने भगवान सम्बन्धी आस्थायें समाप्त कर दी हैं और उनके स्थान पर मनुष्य की श्रेष्ठता की स्थापना की है।''

ब्रह्मानन्द जी का यह कथन सत्य नहीं है कि 31 जुलाई 1937 को कांग्रेस पार्टी ने नरेन्द्र देव जी को [illegible] पार्टी का नेता चुना था जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया।* [illegible] समय प्रदेश कांग्रेस के [illegible] उन्हें [illegible] सकता था। ब्रह्मानन्द जी का यह कथन [illegible] 23 मार्च 1937 को हुआ था, 31 जुलाई 1937 को नहीं। [illegible] के लिए नरेन्द्र देव ने स्वयं पन्त जी का नाम प्रस्तुत किया था और पन्त जी चुने गये थे। नरेन्द्र देव जी के मन में पता नहीं क्या बात थी कि उन्होंने अपना नाम प्रस्तुत न करके पन्त जी का नाम प्रस्तुत किया।

जयप्रकाश नारायण जी मार्च 1940 में जमशेदपुर में भाषण देने पर गिरफ्तार किए गये थे। नरेन्द्र देव जी ने 25 अगस्त 1940 को [illegible] विचारों को अनुचित ठहराते हुए युद्ध में सहायता न देने के औचित्य पर एक लेख लिखा था। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी ने आजादी की लड़ाई को चलाने के लिए एक "युद्ध समिति" की स्थापना की थी

16 जून 1941 को नरेन्द्र देव जी बीमारी के कारण लखनऊ में [illegible] रोड पर श्री विशन नारायण दर के मकान में विश्राम कर रहे थे। वहाँ से पुलिस ने गिरफ्तार कर आगरा केन्द्रीय कारागार में पहुँचा दिया। बाद में जेल में स्वास्थ्य बिगड़ने पर 22 सितम्बर 1941 को उन्हें छोड़ा गया।

गांधी जी ने जब सीधी कार्यवाही करने का निश्चय किया उस समय नरेन्द्र देव जी का हृदय आन्दोलित हो उठा। गांधी जी ने उन्हें उचित अवसर आने तक रुकने को कहा। उत्तर प्रदेश के आन्दोलन का संचालन उन्होंने नरेन्द्र देव जी को, उड़ीसा का राम मनोहर लोहिया जी को और बंगाल का भार [illegible] को सौंपने का निश्चय किया था। नरेन्द्र देव जी 28 मार्च 1942 को बीजापुर गये, वहाँ से [illegible] भेजे गये और वहाँ से वर्धा पहुँचे। वहाँ गांधी जी से उनकी लम्बी बात-चीत हुई। सन् 1942 की 10 अगस्त को नरेन्द्र देव जी जवाहर लाल नेहरू इत्यादि के साथ गिरफ्तार हुए और बाद में 15 जून 1945 को छूटकर बाहर आये।

1947 में गांधी जी की सलाह से आचार्य नरेन्द्र देव का नाम कांग्रेस के अध्यक्ष पद के लिए पेश किया गया था। उस समय सबने इस बात को स्वीकार किया था

---

* टुवर्ड्स सोशलिस्ट सोसाइटी—सं. ब्रह्मानन्द   * कृपया परिशिष्ट 5 देखें

किन्तु जो लोग आचार्य नरेन्द्र देव जी को नहीं चाहते थे उन्होंने गांधी जी के परामर्श को न मानकर उनके नाम के स्थान पर डा. राजेन्द्र प्रसाद का नाम पेश कर दिया। प्रो. मुकुट बिहारी लाल के अनुसार गांधी जी ने गोविन्द बल्लभ पन्त के जरिये राजेन्द्र बाबू को संदेश भेजा कि वह अध्यक्ष का पद स्वीकार न करें। पर यह संदेश उन्हें नहीं पहुँचाया गया और जब बाद में गांधी जी को इस बात का पता चला तब राजेन्द्र बाबू को इस बात का बड़ा क्षोभ हुआ कि गांधी जी की राय न होते हुए भी उन्हें अध्यक्ष पद ग्रहण करना पड़ा। उन्होंने आचार्य नरेन्द्र देव और जयप्रकाश नारायण से कांग्रेस कार्य समिति का सदस्य बनने की बात कही पर उनके अस्वीकार करने पर उनके मशविरे से श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय को कांग्रेस वर्किंग कमेटी की सदस्या बनाया गया। कुछ समय बाद सरदार बल्लभ भाई पटेल ने आचार्य नरेन्द्र देव की उपस्थिति में श्री अच्युत पटवर्धन से कहा कि "नरेन्द्र देव जी कांग्रेस के अध्यक्ष हो गये होते लेकिन तुम लोगों ने उन्हें घेर रखा है।" यह सुनकर अच्युत जी तो चुप रहे किन्तु नरेन्द्र देव जी ने जोश में भरकर कहा कि किसी भी मुल्क के नौजवानों के दिलों पर बादशाहत करना कोई कम बात नहीं है। सरदार पटेल केवल आचार्य जी को कांग्रेस का अध्यक्ष पद ग्रहण करने से रोक कर सन्तुष्ट नहीं हुए वरन उन्होंने आचार्य जी को 1947 में देशी रियासतों की जनता के संगठन आल इंडिया स्टेटस पीपुल्स कान्फ्रेंस का भी कार्यकारी अध्यक्ष नहीं होने दिया। यह स्थान उस समय शेख अब्दुल्ला के जेल में डाले जाने से खाली हुआ था। उसके कुछ ही दिनों बाद 30 जनवरी, 1948 को दिल्ली में नाथू राम गोडसे की गोलियों के शिकार होकर गांधी जी चल बसे और उनकी मृत्यु के साथ नरेन्द्र देव जी के कांग्रेस में बने रहने की संभावनायें भी एक प्रकार से समाप्त हो गयीं।

विधानसभा से त्यागपत्र

31 मार्च 1948 को आचार्य जी ने संयुक्त प्रान्तीय विधान मण्डल की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया और उनके साथ श्री रघुकुल तिलक, मलखान सिंह, हरिश्चन्द्र बाजपेयी, बुद्धि सिंह, ईश्वर शरण, गजाधर प्रसाद चन्द्रहास, सर्वजीत लाल वर्मा, दामोदार दास, चन्द्रिका प्रसाद, राम नरेश सिंह तथा सिद्धेश्वर राय ने भी प्रान्तीय विधान मण्डल की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया। त्यागपत्र देते समय विधान सभा में नरेन्द्र देव जी ने जो भाषण किया था वह अनूठा था तथा स्नेह और संवेदना से ओतप्रोत था। आचार्य जी के उस भाषण में क्रोध तथा कड़ुवाहट का लेशमात्र न था। उसके बाद के जिन-जिन लोगों ने त्यागपत्र दिये थे उन-उन लोगों के स्थानों के लिए उप-चुनाव हुए। नरेन्द्र देव जी 5 नगरपालिकाओं के क्षेत्र में विधान सभा के सदस्य थे। त्यागपत्र देने के बाद उन

5 नगर पालिकाओं के क्षेत्र से आचार्य जी — पुनः चुनाव लड़े, किन्तु वह कांग्रेस प्रत्याशी बाबा राघवदास से पराजित हुए।

9 अगस्त 1946 को संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) विधान सभा ने जमींदारी प्रथा को समाप्त करने के लिए सिद्धान्त रूप से एक संकल्प स्वीकार किया। इस संकल्प के अनुकूल योजना तैयार करने के लिए एक समिति की स्थापना की गयी। इस समिति को आचार्य नरेन्द्र देव जी ने 1947 में एक लिखित स्मृति पत्र भेजा था। 1948 में इस समिति की रिपोर्ट प्रकाशित हुई। इस समिति की अनेक अनुशंसायें आचार्य जी को स्वीकार न थीं। इसकी संस्तुतियों में भूमिहीन किसानों के हितों के समुचित संरक्षण की उपेक्षा की गयी थी। समिति की संस्तुतियाँ शिकमीदारों के बहुत बड़े हिस्से को अधिकार-विहीन कर देती थीं। किसानों की लाभकर जोतों को भी क्षति पहुँचती थी। मुआवजा के सम्बन्ध में समिति ने जिस व्यवस्था की सिफारिश की थी उससे छोटे जमींदारों का पुनर्वास असम्भव था और बड़े जमींदारों को काफी बड़ी रकम मिल जाती थी।

यू. पी. जमींदारी उन्मूलन समिति की रिपोर्ट प्रकाशित होने के कुछ अर्से बाद अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा नियुक्त कृषि सुधार समिति लखनऊ आयी। इस समिति के सामने आचार्य नरेन्द्र देव जी ने अपने विचारों को प्रस्तुत करते हुए यू. पी. जमींदारी उन्मूलन की रिपोर्ट की संस्तुति की आलोचना की।



प्रजा समाजवादी पार्टी का जन्म

29 मई 1948 को आचार्य नरेन्द्र देव जी ने डा राम मनोहर लोहिया द्वारा आयोजित सम्मेलन का उदघाटन करते हुए पचो से गाँवो मे शोषितो का सयुक्त मोर्चा कायम करने का अनुरोध किया उस सम्मेलन के कुछ दिन बाद यह देखकर कि गाँव पचायतो के काम मे प्रान्तीय सरकार अनावश्यक रूप मे हस्तक्षेप कर रही है और पच नामुनासिब दबाव डाल रहे है। आचार्य जी ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमे उन्होने अनुचित कार्रवाइयो की भर्त्सना की। 1949 मे पछुआ हवा ओर ओलो के कारण देवरिया मे फसल को बहुत क्षति पहुँची थी। क्षतिपूर्ति क प्रश्न को लेकर बहुत दिनो तक पत जी और नरेन्द्र देव जी मे मतभेद रहा।

मार्च1949 मे पटना आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता मे सोशलिस्ट पार्टी का सम्मेलन सम्पन्न हुआ। अप्रैल 1950 मे आचार्य जी ने शोषित पार्टी की पंजाब शाखा के सम्मेलन की जालधर मे अध्यक्षता की। सितम्बर 1952 मे सोशलिस्ट पार्टी ने किसान मजदूर प्रजा पार्टी से मिलकर प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का निर्माण किया। 19 जून, 1953 को सोशलिस्ट पार्टी का अधिवेशन बैतूल (मध्य प्रदेश) मे हुआ। दिसम्बर 1955 मे प्रजा सोशलिस्ट पार्टी ने अपने गया-सम्मेलन मे जो नीति सम्बन्धी घोषणा स्वीकार की उसमे माग की गयी थी कि समाजवादी समाज म राष्ट्रीयकृत उद्योगो की व्यवस्था की जाय ताकि मजदूरो को स्वतन्त्रता तथा सुरक्षा सुलभ हो सके।

नवम्बर 1951 मे आचार्य जी ने आसन्न आम चुनाव के सिलसिले मे एक बार फिर पूर्वी पजाब का दौरा किया था। उसी सिलसिले मे वह जालधर और अमृतसर भी गये थे। जून 1950 मे श्री मेहर अली की अनुपस्थिति में श्री अशोक महता की अध्यक्षता मे सोशलिस्ट पार्टी का मद्रास मे सम्मेलन हुआ ——— होने क नरन्द्र देव जी उस में नहीं हो सक डा राम

के प्रधान मंत्री जयप्रकाश द्वारा दिये गये राष्ट्र भाषण में कुछ लोगों का यह विचार बना कि जयप्रकाश जी सत्याग्रह का समर्थन करके मार्क्सवाद और गांधीवाद के बीच समन्वय स्थापित करना चाहते हैं। सम्भवतः कुछ प्रतिनिधियों ने सोशलिस्ट पार्टी के मूल सिद्धान्त ''जनतान्त्रिक समाजवाद'' के बारे में अपना मतभेद प्रकट किया। इस विवाद को दूर करने के लिए आचार्य जी ने एक लेख लिखा, जिसका शीर्षक था ''जनतान्त्रिक समाजवाद ही क्यों''। 1951 में श्रीमती अरुणा आसफ अली ने भी एक पुस्तिका प्रकाशित की जिसमें उन्होंने सोशलिस्ट पार्टी की रीति-नीति, संगठन और सिद्धान्त की आलोचना करते हुए इसे मार्क्सवादी और क्रान्तिकारी पार्टी के बजाय सुधारवादी पार्टी बनाने और कांग्रेस में शामिल हो जाने की सलाह दी।

1952 के आम चुनाव के लिए घोषणा-पत्र तैयार करने की जिम्मेदारी एक समिति को दी गयी, जिसके सदस्य आचार्य जी और मुकुट बिहारी लाल थे, इस समिति द्वारा तैयार किये गए घोषणा पत्र पर विचार करने के लिए एक शिविर आयोजित किया गया। इसी शिविर में आचार्य नरेन्द्र देव ने एक प्रभावशाली भाषण किया था। शिविर के सभी भाषण एक पुस्तिका के रूप में ''चुनाव घोषणा पत्र'' नाम से छपे। 1952 के चुनाव में पार्टी को पर्याप्त सफलता नहीं मिली। आचार्य जी यह नहीं समझते थे कि 1952 के चुनाव में पार्टी को इतनी कम सफलता मिलेगी। सम्भवतः केवल इसी कारण 1952 के आम चुनाव के बाद में वामपंथी शक्तियों ने देश में काफी जोर पकड़ा। मई 1952 में पचमढ़ी में सोशलिस्ट पार्टी का विशेष सम्मेलन सम्पन्न हुआ, आचार्य नरेन्द्र देव उस समय चीन में थे। पचमढ़ी सम्मेलन के समाप्त होने के बाद सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, अशोक मेहता, गंगा शरण सिंह तथा द्वारिका प्रसाद मिश्र, किसान मजदूर प्रजा पार्टी के नेता आचार्य कृपालानी से मिलने दिल्ली गये। डा. राम मनोहर लोहिया इन लोगों के साथ नहीं गये थे। जयप्रकाश जी भी एक दिन बात करके दूसरे दिन लौट आये। एक जून 1952 से श्रीमती सुचेता कृपालानी और अशोक मेहता से मेल की प्रक्रिया ने तेजी पकड़ ली। अगस्त 1952 में वाराणसी में सोशलिस्ट पार्टी की प्रदेश कार्य समिति की बैठक में किसान मजदूर प्रजा पार्टी के साथ विलयन के सम्बन्ध में विचार-विमर्श हुआ। 1 सितम्बर, 1952 को विलयन के संबंध में विचार करने के लिए बम्बई में जनरल कौंसिल की बैठक हुई। अस्वस्थता के कारण डा. राम मनोहर लोहिया इस बैठक में उपस्थित नहीं हुए। फिर भी उन्होंने समाचार पत्रों में एक विस्तृत लेख प्रकाशित कर विलय का समर्थन किया, और इस विषय पर कृपालानी जी के भी कई लेख प्रकाशित हुए।

इन तमाम बातों को ध्यान में रखकर विलयन का समर्थन करते हुए आचार्य

जी ने बहुत संतप्त हृदय से कहा था कि "वह मार्क्सवादी है और अपने सिद्धान्तो को किसी भी हालत मे छोडने को तैयार नही हैं। चाहे इस कारण अपने मित्रो का ही साथ उन्हें क्यो न छोड़ना पड़े।" नरेन्द्र देव जी ने आगे कहा कि अपने सिद्धान्तो के लिए उन्होने जब जवाहर लाल नेहरू ऐसे मित्र का साथ छोड दिया था तब वह अपने सिद्धान्तो के लिए किसी भी मित्र का साथ छोड सकते है। सोशलिस्ट पार्टी और किसान मजदूर प्रजा पार्टी के विलयन के बाद नयी पार्टी का नाम "प्रजा सोशलिस्ट पार्टी" रखा गया। उसके अध्यक्ष आचार्य कृपालानी और महामंत्री श्री अशोक मेहता नियुक्त हुए।

आचार्य नरेन्द्र देव जी कांग्रेस छोडने को उतावले नहीं थे, पर जब उन्होने कांग्रेस छोडी तब फिर उन्होने कांग्रेस मे वापस जाने की या कांग्रेस के साथ मिली-जुली सरकार बनाने की बात कभी नही सोची। 1953 मे जयप्रकाश नारायण जी को बुलाकर नेहरू जी ने बातचीत की और नेहरू जी के निमंत्रण पर प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के नेताओ के केन्द्रीय सरकार मे सम्मिलित होने की बात चल पडी। आचार्य कृपालानी और अशोक मेहता ने इसका समर्थन किया, किन्तु डा. राम मनोहर लोहिया ने इसका कडा विरोध किया। श्री जय प्रकाश नारायण ने नेहरू जी के सामने 14 सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया और उसके आधार पर मिली-जुली सरकार बनाने की बात कही। आचार्य नरेन्द्र देव जी ने जब यह बात सुनी तो उन्होने साफ शब्दो मे जय प्रकाश नारायण जी से कहा कि वह इस सुझाव से सहमत नही है। नेहरू जी भी इसके लिए तैयार नहीं थे। अत यह बात वहीं समाप्त हो गयी। किन्तु इस घटना से प्रजा सोशलिस्ट पार्टी पार्टी में एक विवाद खडा हो गया। इस विवाद से निपटने के लिए जून मे पार्टी का एक विशेष कन्वेन्शन बुलाया गया। पार्टी के कट्टर कार्यकर्ता श्री अशोक मेहता और श्री जयप्रकाश नारायण के विचारो के विरुद्ध थे अत श्री अशोक मेहता और जय प्रकाश नारायण जी ने पार्टी कार्यकारिणी से इस्तीफा दे दिया। सम्मेलन ने 15 सदस्यो का एक आयोग नियुक्त किया। पार्टी के कार्यक्रम की जो रूप रेखा तैयार करनी थी वह 1953 के दिसम्बर मास मे पार्टी के प्रयाग-अधिवेशन में प्रस्तुत हुई और स्वीकार की गयी। इस सम्मेलन मे आचार्य कृपालानी पार्टी के अध्यक्ष तथा डा. राम मनोहर लोहिया मंत्री नियुक्त हुए। इस अधिवेशन की कार्रवाई मे आचार्य नरेन्द्र देव और जयप्रकाश जी ने कोई विशेष रुचि नही ली। वे दोनो नेता चुपचाप मच पर बैठे रहे। अन्तिम दिन नरेन्द्र देव जी ने आचार्य कृपालानी के प्रति धन्यवाद का प्रस्ताव पेश करने के लिए एक ओजपूर्ण भाषण किया। अपने भाषण मे उन्होने वर्ग-संघर्ष को समाज की आधारभूत प्रक्रिया बताते हुए विलयन की चर्चा को बंद करने पर जोर दिया। पार्टी मे विवाद चलता रहा। अगस्त 1953 मे अपने विचारो को स्पष्ट करते हुए आचार्य नरेन्द्र देव ने एक विस्तृत वक्तव्य दिया।

अप्रैल 1952 में आचार्य नरेन्द्र देव राज्य सभा के लिए पहली बार निर्वाचित हुए और पुनः अप्रैल 1954 में वह यू.पी. विधान सभा द्वारा राज्य सभा की सदस्यता के निमित्त पूरे 6 वर्ष के लिए चुने गये। राज्य सभा में उनका प्रथम भाषण फरवरी 1953 में राष्ट्रपति के अभिभाषण पर हुआ था। इस भाषण में नरेन्द्र देव जी ने नेतृत्व के विकास पर जोर दिया और इस सम्बन्ध में विश्वविद्यालयों की दशा को सुधारने की ओर ध्यान देने की प्रार्थना की। साथ ही उन्होंने जनता के दृष्टिकोण में आवश्यक परिवर्तन लाने के लिए सहकारिता के आन्दोलन को मजबूत बनाने का आग्रह किया।

जीवन का अन्तिम अध्याय

1953 में आचार्य जी का स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया था। इसी कारण उन्होंने काशी विश्वविद्यालय (बी एच यू) के कुलपति पद से इस्तीफा दे दिया। वह 1954 में अपना इलाज कराने संयुक्त राष्ट्र अमरीका जाना चाहते थे किन्तु लोगों के विचार-विमर्श के फलस्वरूप इंगलिस्तान गये। उनके साथ उनके छोटे पुत्र हर्षवर्धन के मित्र परमेश्वर दयाल भी गये। लन्दन पहुँचकर उन्होंने अपना इलाज कराया और जब स्वास्थ्य ठीक नहीं हुआ तो वहाँ से वह आस्ट्रिया चले गये। 28 जून को वह वियना पहुँचे। वहाँ उन्होंने श्वास के चिकित्सक से अपना इलाज करना शुरू किया। वियना में आचार्य जी ने विश्वविद्यालय के प्रोफेसर पद को भी सुशोभित किया। आचार्य जी वियना के लोगों के सदव्यवहार से बहुत ही प्रभावित थे। उन्होंने लिखा कि वियना के लोग बड़े तपाक से मिलते हैं। इनका व्यवहार बड़ा शिष्ट और मृदु होता है। ओबरलैंडिस में लगभग 25 दिन रहने के बाद आचार्य जी 14 अगस्त को अपने पुराने छात्र डाक्टर सत्य नारायण के साथ एक मोटर कार में जिनेवा को चल पड़े। 15 अगस्त को वह जिनेवा पहुँचे और वहाँ से झील के किनारे-किनारे होते हुए वह मोन्तरो पहुँचे। वहाँ से वह विलनव गये जहाँ किसी समय रोम्या रोलाँ रहा करते थे। वहाँ से वह माउनटेन हाम्फकाक्स गये जहाँ उन्होंने भारत की राष्ट्रीय ध्वजा फहरायी। 18 अगस्त को ज्यूरिख से चलकर वह फ्रैंकफुर्ट पहुँचे, जहाँ जर्मनी के प्रसिद्ध विचारक गेटे के पुराने निवास को देखा और उन्होंने अपने शिष्य सत्यनारायण से बात करते हुए पंडित जवाहर लाल जी की तुलना हावर्ड फास्ट से की। फ्रैंकफुर्ट से हवाई जहाज के जरिये वह बर्लिन गये और वहाँ एक सप्ताह रहे। इस बीच वह पूर्वी बर्लिन भी गये। वहाँ वह कुछ रूसी सिपाहियों से मिले और श्री विनय मुखर्जी के पुत्र से भेंट करके उनसे मास्को के समाचार प्राप्त किये।

आचार्य जी ने कई दिन तक पूर्वी बर्लिन की नेशनल लाइब्रेरी में जाकर रूस के प्रसिद्ध विद्वान शिवास्टकी की बौद्ध दर्शन पर लिखी प्रसिद्ध पुस्तक का अध्ययन किया। उन्होंने पश्चिमी बर्लिन में फ्री यूनिवर्सिटी और हाबोल्ड यूनिवर्सिटी देखी और जर्मनी के मजदूर नेता शूमाकर से भेंट की। शूमाकर ने उन्हें पश्चिमी जर्मनी की राजधानी बान आने को निमन्त्रित किया। आचार्य जी बर्लिन से फ्रैंकफुर्ट होते

हुए ब्रसेल्स गये। वहाँ से वह बान और फिर म्युनिख गये। पश्चिम जर्मनी के प्रमुख सार समाजवादी नेताओं से बातचीत की। वहाँ से फिर एक सप्ताह के लिए वह आवलडिस पहुँचे, जहाँ वह कई दिन तक आस्ट्रिया के प्रधानमंत्री डा. ... से बातचीत करते रहे। ओबरगॉडिंग से इन्सब्रुक होते हुए वह फिर वियना पहुँचे, जहाँ उस समय अन्तर-पार्लियामेन्ट्री कान्फ्रेंस हो रही थी। वहाँ उनकी आस्ट्रिया के प्रसिद्ध मार्क्सवादी विचारक कार्ल काउत्स्की के सुपुत्र से भी भेंट हुई। अपने सुपुत्र हर्षवर्धन के मित्र परमेश्वर दयाल के साथ आचार्य नरेन्द्र देव वियना से यूगोस्लाविया गये जो चीन की तुलना में अधिक रूप से स्वतन्त्र था। यूगोस्लाविया में बहुदलीय व्यवस्था थी। यहाँ पर डा. काडले से आचार्य नरेन्द्र देव की एक बड़ी सारगर्भित बातचीत हुई। बहुदलीय व्यवस्था की पुष्टि में आचार्य जी ने यह भी कहा कि मार्क्सवादियों के बहुत से स्कूल हैं। इस सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि कुछ समय बाद जब यूगोस्लाविया के प्रधान मार्शल टीटो 1955 में भारत आये थे तब आचार्य जी ने प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के अध्यक्ष की हैसियत से उनके सम्मान में एक अभिनन्दन-पत्र प्रस्तुत किया था। मार्शल टीटो के साहस, वीरता, त्याग और सफल नेतृत्व की प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा कि हम सबको इस बात की खुशी है कि आपके नेतृत्व में यूगोस्लाविया के बहादुर देशभक्तों ने अपने शौर्य के बल पर अपने देश को जर्मनी की दासता और नाजियों के अत्याचार से मुक्त कराया।

अपनी लम्बी यात्रा के अन्तिम चरण में आचार्य जी लन्दन से स्वदेश लौटते समय कुछ दिन पेरिस में और फिर कुछ दिन काहिरा में रहे। इस विदेश यात्रा में वह इजराइल भी गये। उन्होंने लेबनान में वहाँ की सोशलिस्ट पार्टी के अध्यक्ष श्री कमाल जुम्बलात से भी भेंट की। यूरोप से घर वापस आने के बाद आचार्य जी अपना सारा समय जनतान्त्रिक समाजवाद के सिद्धान्तों और मूल्यों के प्रसार तथा विद्या और आचरण सम्पन्न नवयुवकों को समाज के कार्य में दक्ष करने में लगाना चाहते थे।

दिसम्बर, 1953 में प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के प्रयाग अधिवेशन के बाद ऐसी आशा हो चली थी कि नये कार्यक्रम और नीति संबंधी वक्तव्य के आधार पर सब मिलकर सुचारु रूप से काम करेंगे। त्रावणकोर कोचीन में कांग्रेस पार्टी और कम्युनिस्ट पार्टी में से किसी को भी बहुमत नहीं मिला था। अतः प्रजा सोशलिस्ट पार्टी को सरकार बनाने के लिए अनौपचारिक ढंग से समर्थन देने की बात कही गई। श्री पोट्टम थानु पिल्लै के नेतृत्व में त्रावणकोर- कोचीन राज्य में प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का पहला मन्त्रिमण्डल बना। अगस्त 1954 तक यह मंत्रिमण्डल निर्विघ्न रूप से काम करता रहा। पर अगस्त में त्रावणकोर में तमिलनाडु नेशनल कांग्रेस के आन्दोलन ने उग्र रूप धारण कर लिया। उसके एक जुलूस के लोगों ने

कुछ सरकारी इमारतो को जलाने के बाद बसो को जलाना शुरू किया और जब पुलिस ने रोकने की कोशिश की तब प्रदर्शनकारियो ने पुलिस पर पत्थर फेके। इस पर पुलिस ने गोली चलायी, जिसके फलस्वरूप चार आदमी मर गये और लगभग एक दर्जन घायल हुए। इस गोली काण्ड ने प्रजा सोशलिस्ट पार्टी मे एक तहलका मचा दिया। पार्टी के महामत्री डा राम मनोहर लोहिया ने इलाहाबाद जेल से, जहा वह उस समय बन्द थे श्री पोट्टम थानु पिल्ले को तार दिया कि मंत्रिमण्डल फौरन इस्तीफा दे दें और न्यायिक जाच करायी जाय। पोट्टम थानु पिल्ले ने पार्टी के महामत्री के इस आदेश को मानने से इकार कर दिया। इस पर डाक्टर लोहिया ने पार्टी के महामत्री के पद से इस्तीफा दे दिया। पार्टी के अध्यक्ष आचार्य कृपालानी नैनी जेल मे डा लोहिया से मिले। पर मामला सुलझने के बजाय और उलझ गया। अत नवम्बर 1954 मे नागपुर मे पार्टी का विशेष सम्मेलन बुलाया गया।

आचार्य नरेन्द्र देव पार्टी के आन्तरिक विवाद से बड़े क्षुब्ध थे। विवाद से अलग रहना ही उचित समझकर वह नागपुर सम्मेलन मे चुप रहे। अध्यक्ष बन जाने पर विवाद के दोनों पक्षो के समर्थको की मिली-जुली कार्य समिति का संगठन ही उन्होने उचित समझा। आचार्य नरेन्द्र देव ने 21 दिसम्बर, 1954 को ने अपनी पार्टी के प्रान्तीय और जिला मंत्रियो को एक परिपत्र भेजा जिसमे उन्होन आत्मसयम और अनुशासन पर जोर दिया। उन्होने लिखा था कि हमारी पार्टी अपने लक्ष्य की पूर्ति का सफल साधन कैसे बन सकती है जब तक हम अपने व्यक्तिगत जीवन को अपने आदर्श के अनुकूल बनाने की भरसक चेष्टा न करे।

उधर काग्रेस ने जनवरी 1955 मे अपने प्रसिद्ध अवाडी-अधिवेशन मे एक प्रस्ताव स्वीकार कर यह निश्चित किया कि समाजवादी ढग का एक ऐसा समाज कायम करना ही योजना का लक्ष्य होगा, जिसमे पैदावार के मुख्य साधन सामाजिक मिलकियत हो या सामाजिक नियत्रण मे हो। इस प्रकार उत्पादन उत्तरोत्तर बढता जाए और बढी हुई राष्ट्रीय सम्पत्ति का समुचित बटवारा हो। काग्रेस अधिवेशन की विषय समिति में इस प्रस्ताव को पेश करते हुए मौलाना अबुल कलाम आजाद ने कहा कि यह लक्ष्य समाजवाद से भिन्न है और इसके जरिये काग्रेस की पुरानी नीति मे कोई परिवर्तन नही होता। खुले अधिवेशन मे प्रस्ताव को पेश करते हुए प्रधान मत्री नेहरू जी ने मौलाना आजाद की बातो को दोहराते हुए कहा कि काग्रेस सन 1931 से इस लक्ष्य को मानती चली आ रही है। आचार्य नरेन्द्र देव ने जनवरी 1955 को अपनी पार्टी के साप्ताहिक पत्र ''जनता'' मे ''प्रजा सोशलिस्ट पार्टी और काग्रेस'' शीर्षक से एक लेख लिखा, जिसमे उन्होने कांग्रेस पार्टी के नये सामाजिक लक्ष्यो का स्वागत करते हुए खुशी जाहिर की और कहा कि यह विवाद अब पार्टी की सीमा मे ही सीमित नही रहा। इस पर श्री मधुलिमये ने 24 जनवरी 1955 को बम्बई के ''फ्री प्रेस जर्नल'' मे यह वक्तव्य प्रकाशित कराया कि प्रजा सोशलिस्ट

पार्टी के बहुसंख्यक सदस्य कांग्रेस को समाजवादी घोषणा को एक बड़ा धोखा समझते है। पार्टी की उत्तर प्रदेश शाखा के अध्यक्ष श्री त्रिलोकी नाथ [illegible] ने इस पर एक वक्तव्य जारी कर आलोचना की जिससे उत्तर प्रदेश की राज्य शाखा मे काफी बेचैनी पैदा हो गयी। इस घटनाक्रम ने आचार्य जी को काफी परेशानी मे डाल दिया। उन्होने 4 मार्च 1955 को एक प्रेस कान्फ्रेंस मे श्री मधुलिमये के लेख की कड़ी आलोचना और भर्त्सना की। इस पर 26 मार्च को बम्बई नगर की पार्टी कार्यकारिणी ने श्री मधुलिमये को एक वर्ष के लिए प्रजा सोशलिस्ट पार्टी से मुअत्तल कर दिया। आचार्य जी के वक्तव्य के तीन-चार दिन बाद ही समाजवादी युवक सभा की कार्यकारिणी ने निश्चय किया कि युवक सभा के आगामी सम्मेलन मे श्री मधुलिमये को अध्यक्षता के लिये और आचार्य नरेन्द्र देव को उद्घाटन के लिये निमंत्रित किया। अप्रैल के दूसरे सप्ताह मे प्रजा सोशलिस्ट पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी ने विवादास्पद प्रश्नो पर तीन प्रस्ताव पारित किये। अपने पहले प्रस्ताव मे पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी ने निश्चय किया कि कांग्रेस के अधिवेशन मे पारित प्रस्तावो के सभी पहलुओ पर पूर्ण तौर पर विचार करने के बाद उसका दृढ निश्चय है कि इन प्रस्तावो द्वारा कांग्रेस की नीति मे कोई मौलिक परिवर्तन नही हुआ है। तथापि उत्तर प्रदेश की प्रान्तीय कार्यकारिणी के 16 अप्रैल 1955 के निर्णय ने पार्टी मे काफी बेचैनी पैदा की और तंग आकर राष्ट्रीय कार्यकारिणी से अनुरोध किया कि डा. राम मनोहर लोहिया के विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाई की जाय। जुलाई के तीसरे सप्ताह मे 15 जुलाई से 22 जुलाई तक पार्टी का सम्मेलन जयपुर मे हुआ। डा. लोहिया भी सम्मेलन मे निमंत्रित किये गये। किन्तु आचार्य नरेन्द्र देव जी ऐसा बीमार पड़े कि वह सम्मेलन मे भाग नही ले सके। लगभग तीन महीने तक जयपुर मे ही उनका इलाज होना रहा। जब यहाँ हालत बिगड़ती ही चली गयी तब आचार्य नरेन्द्र देव लखनऊ चले आये। लखनऊ के अस्पताल मे पड़े-पड़े ही उन्होने नवम्बर महीने मे पार्टी की नया नीति सम्बन्धी घोषणा को ठीक कर उसे राष्ट्रीय कार्यकारिणी के पास भेज दिया। दिसम्बर 1955 के अन्तिम सप्ताह मे बिहार राज्य के प्रसिद्ध नगर गया मे प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का द्वितीय सम्मेलन हुआ जिसमे लगभग 1600 प्रतिनिधियो ने भाग लिया। प्रजा सोशलिस्ट पार्टी की नीति सम्बन्धी घोषणा को ठीक करने के बाद ही 3 जनवरी 1956 को नरेन्द्र देव जी स्वास्थ्य ठीक करने के उद्देश्य से हवाई जहाज के जरिये पेरून्दुराई के लिए रवाना हो गये। उनके साथ उनकी धर्मपत्नी और उनके स्नेही राष्ट्रसेवी गणित शास्त्र के विद्वान तथा लखनऊ विश्वविद्यालय गणित विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष डा. रामधर मिश्र भी थे। यह स्थान मद्रास राज्य के कोयम्बटूर जिले मे है। पेरून्दुराई जाने से पहले ही आचार्य जी ने अपनी पुस्तक "बौद्ध धर्म दर्शन" की प्रस्तावना लिख दी थी। उनके बौद्ध धर्म दर्शन ग्रन्थ मे भगवान बुद्ध के जीवन चरित्र उनकी शिक्षा के विस्तार और विभिन्न निकायो की उत्पत्ति तथा न्याय

आदि का वर्णन है।

श्री गंगा शरण सिंह को प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का स्थानापन्न चेयरमैन नियुक्त किया गया। आचार्य जी ने अपने इस दौरे में जयप्रकाश नारायण जी को लिखा कि वह प्रधानमंत्री नेहरू जी से मिले। आचार्य जी का स्वास्थ्य बिगड़ता ही चला गया। जब 5 दिन तक कोई सुधार नहीं हुआ तब आचार्य जी दूसरे कार्यक्रम को स्थगित कर परेन्दुराई आये। उन्होंने वहाँ अपनी पारिवारिक समस्याओं के सम्बन्ध में बातचीत की। फिर वह इरोड चले गये जिसके बाद आचार्य नरेन्द्र देव इस संसार से चल बसे। इरोड में 19 फरवरी, 1956 को उनका देहान्त हो गया।





आचार्य जी और गांधी जी

आचार्य नरेन्द्र देव की दृष्टि में यदि गांधी जी 20 वीं सदी के अद्वितीय विश्व मानव थे तो गांधी जी ने नरेन्द्र देव को ऐसे रत्न के रूप में देखा जिनका आज़ादी की लड़ाई में असाधारण महत्व है। भारतीय शैली के समाजवाद के अन्यतम प्रवक्ता नरेन्द्र देव जी पर गांधी जी के व्यक्तित्व के प्रभाव को समझने के लिए यह जानना ज़रूरी है कि गांधीवाद से उनके विचारों का आध्यात्मिक परिष्कार हुआ है और वह ऐसा मानते थे कि, "यदि गांधी जी एकाकी चल सकते हैं तो नरेन्द्र देव क्यों नहीं चल सकता।"

काशी विद्यापीठ की सघन वट छाया में आचार्य नरेन्द्र देव को कई विभिन्न अवसरों पर गांधी जी के मौलिक विचारों को जानने के अवसर प्राप्त हुए। प्रथम बार यह अवसर तब आया जब 10 फरवरी 1921 को महात्मा गांधी ने काशी विद्यापीठ का शिलान्यास किया। उस समारोह में शिलान्यास करते हुए गांधी जी ने विद्यापीठ के उत्तरोत्तर उत्कर्ष के लिए कामना की और कहा, "प्रभु से मेरी प्रार्थना है कि दिन-प्रतिदिन इस विद्यापीठ की वृद्धि हो और यह विद्यालय ब्रिटिश शासन को मिटाने व चूर्ण करने में हिस्सा ले।" गांधी जी के उस दिन के सम्बोधन को आचार्य जी कभी नहीं भूले और स्वतन्त्रता के पूर्व उनका सदा यही प्रयत्न रहा कि काशी विद्यापीठ ब्रिटिश साम्राज्य को मिटाने में अपनी पूरी शक्ति लगाये।

दूसरी बार गांधी जी 17 अक्टूबर 1925 को काशी विद्यापीठ में पधारे। इस दिन गांधी जी ने विद्यापीठ के छात्रों और अध्यापकों को चरखे का अर्थशास्त्र समझाया था। अपने भाषण में उन्होंने कहा था कि वह देहात की आर्थिक समस्याओं को जानते हैं और उनका विश्वास है "देश की दरिद्रता से मुक्ति दिलाने वाली चरखे को छोड़ दूसरी कोई वस्तु नहीं है।" गांधी जी के इस विश्वास को स्वीकार करने में नरेन्द्र देव का मार्क्सवादी दृष्टिकोण आड़े आता था और सम्भवतः यह उनको स्वीकार नहीं था। तथापि स्वतन्त्रता के संघर्ष और नये समाज की रचना में किसानों की क्रान्तिकारी भूमिका को वह स्वीकार

करत थ

सितम्बर 1929 को हुआ। उस दिन गाधी जी काशी विद्यापीठ के पदवी दान समारोह मे भाग लेने के लिये उसके कुलपति के रूप मे विद्यापीठ मे पधारे थे। समारोह का सचालन आचार्य नरेन्द्र देव जी कर रहे थे। इस अवसर पर एक विशेष बात यह हुई कि बाबू श्रीप्रकाश से गाधी जी ने कहा 'नरेन्द्र देव जैसे नर रत्न को आपने अब तक कहॉ छिपा रखा था।'' गाधी जी ने समारोह मे बडा ही मार्मिक भाषण किया और कहा ''प्रत्येक महान कार्य मे उसके लिए युद्ध करने वालो की सख्या का महत्व नही होता, निर्णायक तत्व सख्या का नही इस बात का होता है कि वे योद्धा किन गुणो के आकार होते है। जरथुस्त्र, बुद्ध ईसा मोहम्मद तथा अन्य अनेक प्रवक्ताओ को अकेले ही खडा होना पडा था किन्तु उनके अपने अन्दाज और अपने प्रभु के अन्दर जीवन्त विश्वास था और चूकि वे समझते कि ईश्वर उनके साथ है वे अपने को एकाकी नही अनुभव करते थे।' (परिशिष्ट –2)

चौथी बार गाधी जी से नरेन्द्र देव जी का सम्पर्क 1936 मे अक्टूबर मास के मध्य हुआ जब बाबू शिवप्रसाद गुप्त द्वारा निर्मित कराये गये प्रसिद्ध भारत माता मदिर का उदघाटन करने के लिए गाधी जी काशी पधारे थे। इस अवसर पर गाधी जी ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा, ''सेगाव (अब सेवा ग्राम) से कही न जाने वाला यहाँ दौडा आया, क्योकि प्रेम एक विचित्र वस्तु है।----- सो यह प्रेम का धागा ही मुझे यहाँ खीच लाया है।'' गाधी जी ने इस अवसर पर उपस्थित लोगो से यह प्रतिज्ञा करायी थी कि वे अपने दिलो से द्वैष का मैल दूर कर भारत माता की सेवा के लिये सकल्प ले।

इसके सिवा, बाद में और विशेषकर 1942 के पूर्वार्द्ध मे अपने इलाज के लिए आचार्य नरेन्द्र देव को गांधी के साथ ही सेवाग्राम मे काफी दिनो तक रहना पडा। इस अवधि मे गाधी जी के साथ भिन्न-भिन्न अवसरो पर विचार विमर्श करने का अवसर आचार्य जी को मिला था। भारत के भावी समाज की रचना के सम्बन्ध मे गांधी जी, नेहरू जी और नरेन्द्र देव जी के मध्य भी विचारो का आदान प्रदान हुआ था। इसमे क्या आश्चर्य कि समाजवादी क्रान्ति लाने की आचार्य जी की साधना गाधीवादी तरीको मे ढल गयी।

आचार्य जी की दृष्टि मे गाधी जी भारतवर्ष के सर्वश्रेष्ठ मानव थे। उनके ही शब्दो मे ''महात्मा गाँधी ने भारतवर्ष की प्राचीन सस्कृति को और उसकी पुरातन शिक्षा को परिष्कृत कर, युग धर्म के अनुरूप नवीन रूप प्रदान कर और उसमें वर्तमान युग के नवीन सामाजिक एव आध्यात्मिक मूल्यों का पुट देकर एक अन्यतम सामजस्य स्थापित किया। उन्होने नवयुग की अभिलाषाओ और आकाक्षाओं के महान उद्देश्य का सच्च प्रतिनिधित्व किया था।''

आचार्य जी के अनुसार, गाधी जी ने ही भारतीय जनता को इस बात के लिए सुमति प्रदान की कि वह साम्राज्यशाही का विरोध पाशविक शक्तियो द्वारा नही बल्कि

आध्यात्मिक बल के प्रयोग द्वारा करें।

आचार्य जी के अनुसार ' गांधी जी की अहिंसा बेजोड़ थी। भगवान बुद्ध ने कहा था कि अक्रोधेन जयेत क्रोधम। अर्थात अक्रोध से क्रोध को जीतना चाहिए। उनकी अहिंसा के सिद्धान्त का उद्देश्य केवल व्यक्तिगत आचरण का परिष्कार मात्र नहीं था किन्तु वह सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए एक उपकरण था। इस राजनीति के क्षेत्र में महान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए गांधी जी का सफल प्रयोग था। गांधी जी के निधन के बाद 16 फरवरी, 1948 को उत्तर प्रदेश विधान सभा में श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए आचार्य जी ने कहा था कि गांधी जी के प्रति भारतीयों की सच्ची श्रद्धांजलि तब होगी कि वे इस बात की प्रतिज्ञा करें कि समाज में समता लाने, विविध धर्मों एवं सम्प्रदायों में सामंजस्य स्थापित करने, छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े मानव में भेद न करने तथा सबको समान रूप से उठाने के गांधी जी के आदर्श को चरितार्थ करेंगे। स्वयं अपने लिए आचार्य जी ने यह प्रार्थना की थी कि उनमें ऐसी शक्ति पैदा हो कि उनके बताये हुए मार्ग का अनुसरण किसी न किसी रूप में कर सकें।

प्रो. मुकुट बिहारी लाल का कहना है कि आचार्य नरेन्द्र देव के सम्पर्क में आने पर गांधी जी शोषणमुक्त, वर्ग-विहीन और जाति-विहीन समाज के निर्माण का सपना देखने लगे थे और ऐसा मानने लगे थे कि समाजवाद एक शुद्ध चीज है तथा सत्याग्रह जैसे शुद्ध उपाय से ही उसे प्राप्त किया जा सकता है। वह चाहते थे कि सोशलिस्ट पार्टी के लोग कांग्रेस में बने रहें और कांग्रेस में रहते हुए उन्हें अपनी विचारधारा के अनुसार वर्गविहीन समाज के निर्माण के लिए कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता हो। प्रो. मुकुट बिहारी लाल के कथन को यदि मान लिया जाय तो मानना होगा कि गांधी जी स्वयं कांग्रेस की बागडोर को नरेन्द्र देव या श्री जयप्रकाश नारायण जी को सौंपने को तैयार हो गए थे।



आचार्य जी और पं. नेहरू

सन् 1920 का असहयोग आन्दोलन देश के लिये ही नही वरन अनेक लोगो के लिये एक क्रान्तिकारी घटना थी। इसने जवाहर लाल जी के जीवन को पूर्णतया बदल दिया था। उनके पूरे कुटुम्ब ने उस आन्दोलन मे भाग लिया। नरेन्द्र देव जी के शब्दो मे असहयोग आन्दोलन में एक प्रकार से उनका आध्यात्मिक पुनर्जन्म हुआ। आन्दोलन के प्रभाव में आकर उनका सारा जीवन और व्यवहार बदल गया क्योंकि अपने आचरणों मे होने वाले परिवर्तनो के प्रति वह सदा सवेदनशील रहे है। गाधी जी के प्रभाव मे आने पर आचार्य जी के अनुसार जवाहर लाल जी ने गीता का भी अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था।

आचार्य जी के मतानुसार जवाहर लाल जी का शैशव काल बहुत ही सरक्षित था। उन्हे परिवार में बेहद प्यार मिला था। उन्हें बचपन मे ही विदेश भेजा गया जहां उनकी जीवन-पद्धति विदेशी हो गयी। विलायत में उन्होने अपने को राजनीति से बिल्कुल अलग रखा। वहा उन दिनो यदि उन पर कोई राजनीतिक प्रभाव पडा तो वह सन 1908 मे लोकमान्य तिलक के 6 वर्षों के कारावास की एक प्रतिक्रिया के रूप मे था अथवा इग्लैण्ड मे समाजवादी आदर्शों का प्रचार करने वाली फेबियन सोसायटी की विचारधारा का था। बाद मे गाधी जी के आन्दोलन के प्रभाव ने जवाहर लाल जी के व्यक्तित्व का पूरी तरह से परिष्कार कर दिया। उनके जेल जीवन का प्रारम्भ हुआ। जैसा कि जवाहर लाल जी ने अहमदनगर किले की जेल मे आचार्य नरेन्द्र देव जी को बताया था, जेल-जीवन ने उन्हें आदमी बना दिया। आचार्य जी उनकी इस बात को सत्य मानते थे और उनका भी यही विश्वास था कि यदि जवाहर लाल जी के जीवन मे कारावासों की कहानी न शुरू हुई होती तो वह अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति न बन पाते। नरेन्द्र देव जी के अनुसार, नेहरू जी के व्यक्तित्व मे राजनीतिक क्रान्ति की कहानी 1925 से 1927 की उस अवधि मे प्रारम्भ हुई जब वह यूरोप गये और अनेक बार की जेल-यात्राओ के कारण जब उन्हे पढने-लिखने के अवसर मिले, जिनका उन्होने बडा ही सदुपयोग किया।

सन् 1922 के बाद असहयोग आन्दोलन वापस लिया जा चुका था। देशबन्धु चितरंजन दास तथा मोतीलाल जी ने गाधी जी से पृथक होकर स्वराज पार्टी खड़ी

कर दी थी। जवाहर लाल जी, आचार्य जी की दृष्टि में, इस विवाद में [illegible] और अपनी पत्नी को लेकर वह यूरोप चले गये। यूरोप से सन् 1927 में वापस आने के बाद जवाहर लाल जी ने जो पहला काम किया वह यह था कि सन् 1927 में डा. मुख्तार अहमद अन्सारी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुए अहमदाबाद कांग्रेस में उन्होंने पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव रखा। इस अधिवेशन में गांधी जी उपस्थित नहीं थे। जवाहर लाल जी का पूर्ण आजादी का संकल्प स्वीकार किया गया जिसकी कांग्रेस द्वारा स्वीकृति पर गांधी जी को कोई विशेष प्रसन्नता नहीं हुई थी। फिर भी अपने संकल्प को आगे बढ़ाने के लिए जवाहर लाल जी ने सुभाष बाबू को साथ लेकर ''इन्डिपेन्डेंस आफ इंडिया लीग'' की स्थापना की जिसके सबल बनाने में आचार्य नरेन्द्र देव ने भी उनके साथ सहयोग किया। लाहौर अधिवेशन में कांग्रेस के द्वारा पूर्ण स्वतन्त्रता का संकल्प स्वीकार किये जाने के पश्चात ''इन्डिपेन्डेंस आफ इण्डिया लीग'' विलीन हो गयी, यद्यपि उसका उद्देश्य पूर्ण नहीं हो सका था। सन् 1927 और सन् 1929 के बीच गांधी जी और जवाहर लाल जी के बीच मतभेदों की एक बड़ी खाई पैदा हो गयी थी किन्तु जवाहर लाल जी जानते थे कि भारतवर्ष में गांधी युग का प्रवर्तन हो चुका है। अतः गांधी जी की इच्छाओं के प्रतिकूल वह कोई भी नीतिगत प्रतिपादन या कोई कार्य नहीं कर सकते थे; साथ ही गांधी जी भी जवाहर लाल जी की उपयोगिता को पहचानते थे। जैसा कि एक बार बातचीत में नेहरू जी ने आचार्य जी को बताया था वह गांधी जी के व्यक्तित्व को भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की वस्तुस्थिति का अभिन्न अंग मानते थे। इस प्रकार आचार्य जी के अनुसार, गांधी जी आगे बढ़ते गये और जवाहर लाल जी उनसे असहमत होकर भी उनका अनुकरण करते गये तथा उनसे सहमत होते गये

नरेन्द्र देव जी के अनुसार जवाहर लाल जी की एक विशेषता जो उन्होंने अहमदनगर जेल में देखी वह यह थी कि नेहरू जी दूसरों के विपरीत तर्कों को भी बड़े ध्यान से सुनते थे और यह जानने का प्रयास करते थे कि वह इनसे कहां तक सहमत हो सकते हैं। आमतौर पर लोग अपने तर्कों के आगे दूसरे के तर्कों को नहीं सुनते। आचार्य जी के अनुसार दूसरों की बात भी सुनना नेहरू जी का गुण था किन्तु इससे उनके अदर यह दोष भी पैदा हो गया था कि जब कभी बहुत ही विवादास्पद मसला उठता था तो वह अपना मत निश्चित रूप से स्थिर करने में असमर्थ रहते थे। तथापि इसका यह मतलब नहीं कि सभी विषयों पर उनका कोई मत नहीं था या वह अपने मत का दृढ़ता से अनुसरण नहीं करते थे।

आचार्य जी के अनुसार पश्चिमी सभ्यता और शिक्षा के प्रभाव के कारण नेहरू जी के मन में पश्चिमी विश्वविद्यालयों के उपाधिधारियों के प्रति विशेष अनुराग पैदा हो गया था। यदि नेहरू जी के बहनोई रणजीत सीताराम पंडित को उन्हें प्राचीन भारत की गरिमा से परिचित कराने में सफलता न प्राप्त हुई होती तो नेहरू

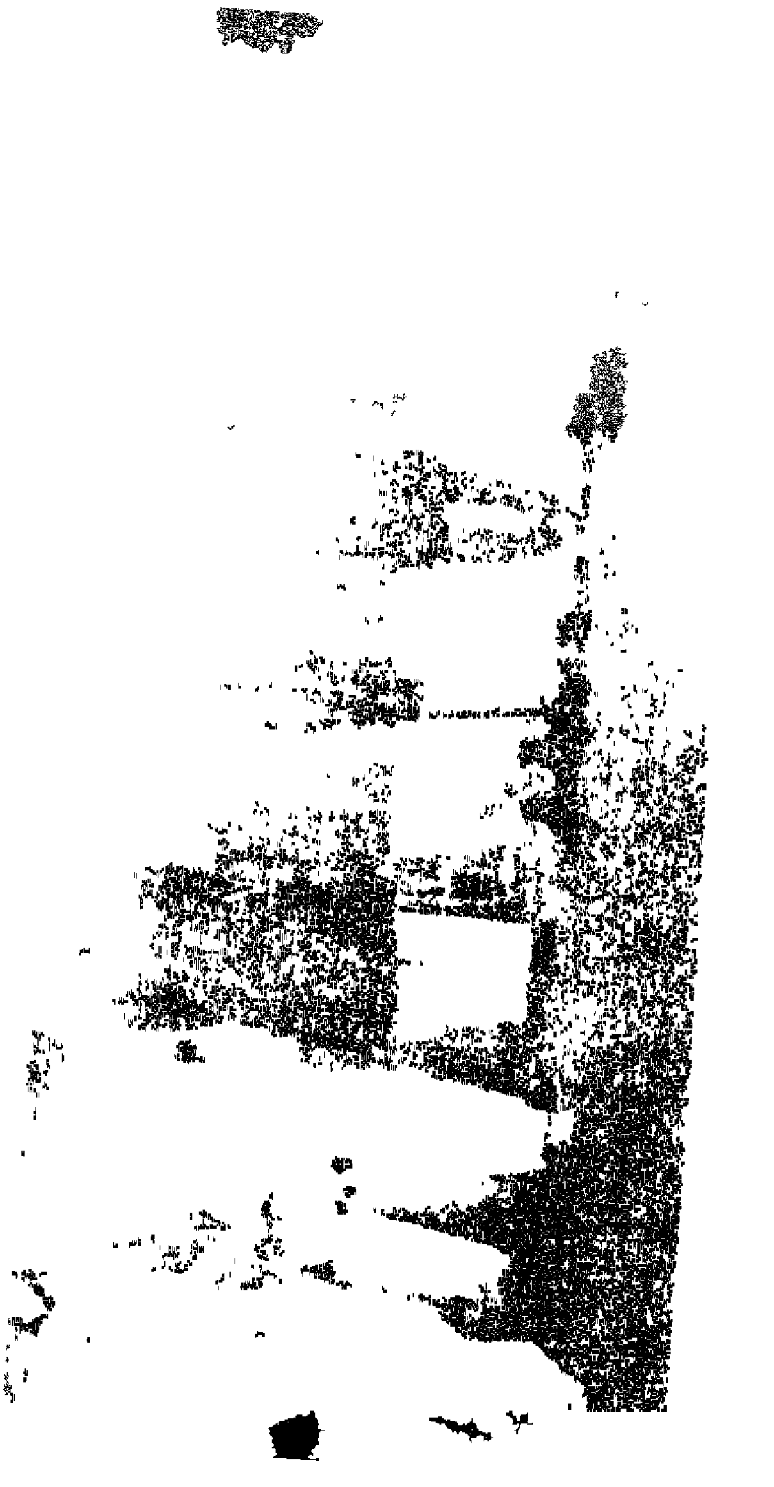
जी उस प्रभाव से वंचित रह जाते जो भारतीय संस्कृति से उनको प्रभावित करता हुआ बाद मे देखा गया।

नरेन्द्र देव जी के अनुसार जवाहर लाल जी समाजवादी थे और अन्तर्राष्ट्रवादी भी थे। आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस के वर्गजन्य संगठन के भी वह सन 1929 मे अध्यक्ष रहे और यह उन पर समाजवादी प्रभाव ही था जिसने उन्हे सन 1931 मे कांग्रेस के कराची-अधिवेशन मे मौलिक अधिकारो सबधी सकल्प रखकर उसे पारित कराने के लिए उत्प्रेरित किया था। जैसा कि जवाहर लाल जी का स्वय का कहना था गांधी जी से समाजवादी समाज की स्थापना के लिए आशा करना व्यर्थ था क्योंकि उनका मुख्य उद्देश्य केवल जनता-जनार्दन की आर्थिक स्थिति को सुधारना तथा लोकतंत्र के आदर्श का उन्नयन था। निस्सन्देह नेहरू जी वैज्ञानिक समाजवादी थे और उसके सिद्धान्तो को मानते थे किन्तु मार्क्सवाद या लेनिनवाद उन्हे पूरी तरह से स्वीकार नही था। उनका यह मानना था कि परिस्थितियां सिद्धांतों से अधिक प्रबल होती है। इसलिए परिस्थितियो को देखकर वह अनिश्चित भविष्य के लिए वर्तमान की बलि देने के लिए कभी तैयार नही थे। वह बड़े ही विश्वास के व्यक्ति थे और बुनियादी से धर्मनिरपेक्ष थे। फिर भी मानवीय मूल्यो और नैतिक आचरणो के लिए उनके हृदय मे बडा सम्मान था। वह सामाजिक आन्दोलन के आदर्श के समर्थक तथा लोकतन्त्र और स्वतन्त्रता के लिए नियोजन मे विश्वास रखते थे। वह यह मानते कि उत्पादन के साधनो का राष्ट्रीयकरण किये बिना जनता को लाभ नही पहुंचाया जा सकता, किन्तु फिर भी वह ऐसा कुछ नही करना चाहते थे जिससे व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर कोई अकुश लगे। आचार्य जी को जवाहर लाल जी के प्रधानमंत्री बनने के बाद उनमे अनेक परिवर्तन नजर आये। उन्हे ऐसा लगा कि जवाहर लाल जी ने प्रधानमंत्री बनने पर नौकरशाही के तंत्र से तथा ब्रिटिश राज्य की बुरी धरोहरों से अपने को बाध लिया। वह गत्यात्मक चिंतन और प्रगतिशील कार्यों की बात अवश्य करते थे किन्तु उनके शासन मे दुर्बलता तथा हिचकिचाहट स्पष्ट रूप से दिखाई देती थी। यद्यपि नेहरू जी की सरकार यथास्थितिवाद की समर्थिका नही थी, फिर भी आचार्य जी उसे यथास्थितिवाद की समर्थक नही थी, फिर भी आचार्य जी उसे समझौतापरस्त सरकार मानते थे। पद ग्रहण करने पर उन्हे उन महान उद्देश्यों की सिद्धि पर सन्देह होने लगा, जिनके लिए वह एक समय लोगों का आवाहन किया करते थे। आचार्य जी को इस बात का खेद था कि किन्ही मनोवैज्ञानिक कारणो से नेहरू जी के चिंतन तथा कार्यान्वयन की महान क्षमताओं का राष्ट्र पूरी तरह से लाभ नहीं उठा पा रहा था।











आचार्य जी और किसान आन्दोलन

किसान आन्दोलन मे आचार्य नरेन्द्र देव का योगदान वैचारिक और सैद्धान्तिक अधिक रहा है यद्यपि उन्होने किसानो के बीच भी सक्रिय रूप से भी कार्य किया। वह किसान आन्दोलन के माध्यम से ही पहले-पहल सार्वजनिक जीवन से जुडे। जवाहर लाल जी से उनका परिचय इसी आन्दोलन के सिलसिले मे हुआ। शुरू मे फैजाबाद जिले मे किसानो के बीच उन्होने जमकर कार्य किया और 1930 मे कृषको की दयनीय दशा का अध्ययन करने के लिए कई जिलो का दौरा किया। प्रान्तीय काग्रेस द्वारा गठित इन्क्वायरी कमेटी के सदस्य की हैसियत से 1931 मे उन्होने अपने सहयोगी सदस्य डा सपूर्णानन्द के साथ गोरखपुर तथा बस्ती जिले के किसानो की दयनीय अवस्था का विस्तृत अध्ययन किया और अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया।(परिशिष्ट-3)

आचार्य जी के पिता बलदेव प्रसाद जी को जमींदारी से बडा लगाव था लेकिन नरेन्द्र देव जी को लगा कि यह जमींदारी प्रथा ही भारतीय किसानों की सारी दुर्दशा की जड है। उन्होने साफ-साफ कहा कि जमींदारी प्रथा का उन्मूलन किये बिना मात्र छिटपुट भूमि सुधारो से, किसानो की समस्याए हल नहीं की जा सकती। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु किसानो को वर्ग-सघर्ष के लिये तैयार करना वह आवश्यक मानते थे। उनका मानना था कि किसानो की बुनियादी मागो के आधार पर उनकी वर्ग-चेतना को जागृत किया जाय और उनकी इस उर्जा का इस्तेमाल आजादी हासिल करने तथा समाजवादी समाज की रचना के लिए किया जाय।

सन 1934 के बाद आचार्य जी ने इस बात की चेष्टा की कि किसानो और मजदूरो की सुसगठित सस्थाओ को काग्रेस मान्यता प्रदान करे और सामूहिक सदस्यता तथा प्रतिनिधित्व द्वारा उन्हे अपने मे जोडे। 1936 मे प्रान्तीय कांग्रेस के बरेली-सम्मेलन मे अध्यक्ष पद से अपने भाषण मे उन्होने कहा कि जनसाधारण के आर्थिक सघर्ष का साम्राज्यवाद-विरोधी सघर्ष से जोडा जाय और इस प्रकार राष्ट्रीय आन्दोलन मे जन साधारण को भागीदार बनाया जाय।

1939 मे नरेन्द्र देव जी अखिल भारतीय किसान सभा मे गया-अधिवेशन के चुने गये उनकी ही प्रेरणा से इसी अधिवेशन में यह निश्चय किया गया कि

किसान सभाओं द्वारा साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष में कांग्रेस को सहयोग प्रदान किया जाय और देश में एक स्वतन्त्र जनतान्त्रिक राज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया जाय। किसान आन्दोलन को अग्रसर करने का कार्य करते हुए आचार्य जी का परिचय राहुल सांकृत्यायन, स्वामी सहजानन्द, स्वामी भगवान, रामवृक्ष बेनीपुरी, जय प्रकाश नारायण, प्रोफेसर रंगा जी रंगा, मोहन लाल गौतम आदि लोगों से हुआ।

किसानों के हित साधन के लिए आचार्य जी ने उत्तर प्रदेश विधान परिषद् के मंच का भी इस्तेमाल किया। पं. गोविन्द बल्लभ पंत की अध्यक्षता में बनी जमींदार उन्मूलन कमेटी को एक स्मृति-पत्र भेजकर उन्होंने जमींदारों को मुआवजा देने का विरोध किया और कहा कि भूमि तो प्रकृति की देन है, इसको किसी की व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं समझा जा सकता। उनका मत था कि भूमि की उर्वरता और उसका उत्पादन समाज का धन है और इसलिए उसकी रक्षा तथा तथा अभिवृद्धि राष्ट्र का कर्तव्य है। उनका तर्क था कि जमींदारों ने इस कर्तव्य की उपेक्षा की है, इसलिए उनको कोई राहत क्यों दी जाय?

वैचारिक स्तर पर नरेन्द्र देव जी ने इस कम्युनिस्ट मान्यता को निरस्त कर दिया कि किसान तो प्रतिगामी होता है और इसलिए वह किसी क्रांति का नेतृत्व नहीं करेगा, तथा करेगा भी तो धोखा देगा। जैसा कि 1935 में अहमदाबाद में 23-24 जून को आयोजित समाजवादी सम्मेलन में आचार्य जी ने कहा था, उनका ऐसा अभिमत था कि चूंकि भारत में अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए विदेशी साम्राज्यवादी हुकूमत ने देशी रजवाड़ों, जमींदारों, पूंजीपतियों और छोटे अमीर वर्गों जैसे प्रतिगामी तत्वों के साथ मोर्चा कायम कर रखा था, इसलिए उनका प्रभावकारी ढंग से मुकाबला करने के लिए कांग्रेस के संघर्ष के साथ किसानों, मजदूरों और निम्न मध्यम वर्ग के संघर्ष को जोड़ना जरूरी था।

'नेशनल हेराल्ड', लखनऊ के 10 फरवरी 1946, 25 जुलाई 1947 और 30 मार्च 1948 के अंकों में व्यक्त किये गये आचार्य जी के विचारों के अनुसार, एक अकेला नेता समाजवादी राज्य की स्थापना नहीं कर सकता। ऐसा राज्य किसानों तथा मजदूरों द्वारा और एक ऐसी पार्टी द्वारा ही कायम किया जा सकता है जिसमें इन वर्गों का बहुमत हो। नरेन्द्र देव जी किसानों का संगठन इसलिए विशेष रूप से आवश्यक मानते थे कि भारत में ब्रिटिश शासन ने ही जमींदारों को बनाया था और ये जमींदार एक वर्ग के रूप में अपने को राष्ट्रीय आन्दोलनों से अलग रखे हुये थे।

डा. आशा गुप्ता ने लिखा है, आचार्य जी ने पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों को अस्वीकृत कर दिया था। पूंजीवाद को इसलिए कि वह शोषण और निष्ठुर स्वार्थों पर आधारित था, और साम्यवाद को इसलिए कि वह नागरिक स्वतन्त्रताओं को नकारता था। किसानों के आन्दोलन की क्रान्तिकारी सम्भावनाओं को आचार्य जी मानते थे, किन्तु

नियो पिजेण्डिज्म अर्थात् उनका मालिकाना प्रभुत्व उनको मंजूर नहीं था।

अपने जीवन के दो लक्ष्य आचार्य जी ने निर्धारित किये थे- (1) देश की मुक्ति (2) समाजवादी समाज की स्थापना। उनका विचार था कि हमारे विश्वविद्यालय देश मे लोकतंत्र के अनुरूप वैचारिक तथा भावनात्मक वातावरण तैयार करने मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। वह चाहते थे कि विश्वविद्यालय सर्जनात्मक विचारो के केन्द्र बनें इनके माध्यम से किसानो तथा सुधी वर्ग मे निकट सम्पर्क कायम हो तथा इनके मध्य विचारो के आदान-प्रदान से समाज विकसित हो।



शिक्षाविद् आचार्य जी

28 मार्च 1938 को संयुक्त प्रान्त की सरकार ने शिक्षा के लिए दो समितियाँ नियुक्त की। नरेन्द्र देव जी माध्यमिक शिक्षा समिति के अध्यक्ष हुए। 13 अप्रैल 1938 को सरकार ने घोषित किया कि ये दोना समितियाँ एक संयुक्त समिति की उप-समितियो की हैसियत से काम करेंगी। 13 फरवरी, 1939 को इस समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी। आचार्य नरेन्द्र देव ने इस समिति का कार्य सम्पन्न किया। मई 1948 को शिक्षा मंत्री डा सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता मे लखनऊ, इलाहाबाद और आगरा विश्वविद्यालयो के कार्यों की जाच के लिए एक दूसरी समिति बनायी गयी। आगे चलकर समिति को दो उपसमितियो मे बाट दिया गया। एक उपसमिति के सुपुर्द इलाहाबाद विश्वविद्यालय के कार्यों की जाच थी और उसक अध्यक्ष आचार्य नरेन्द्र देव हुए। आगरा विश्वविद्यालय के कार्यों की जाच एक दूसरी उप-समिति को सौपी गयी। उसमे यह निश्चय हुआ कि शिक्षा मंत्री की अनुपस्थिति मे आचार्य जी ही संयुक्त समिति की अध्यक्षता करेंगे। नवम्बर 1939 मे युद्ध मे सहयोग के प्रश्न पर प्रान्तीय मंत्रिमण्डल का इस्तीफा दिये जाने के कारण कमेटी के कार्य मे विघ्न पैदा हो गया। कमेटी के अध्यक्ष सम्पूर्णानन्द जी ने 25 नवम्बर 1939 को बैठक बुलाने को लिखा। सम्पूर्णानन्द जी का वह पत्र पाते ही वह कमेटी समाप्त कर दी गयी।

1951 मे कांग्रेस सरकार ने माध्यमिक शिक्षा की प्रगति के सम्बन्ध मे जाच के लिए आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता मे माध्यमिक शिक्षा समिति नियुक्त की। इस कमेटी ने पिछले 10 वर्षों की गतिविधियों की जांच करके शैक्षिक पाठ्यक्रम में कई संशोधनों की सिफारिश की। इन्हीं दिनो नरेन्द्र देव जी ने लिपि सुधार समिति और संस्कृत शिक्षा सुधार समिति की अध्यक्षता के उत्तरदायित्वों का निर्वहन किया।

आचार्य नरेन्द्र देव ने 1947 मे आगरा विश्वविद्यालय और 1949 मे लखनऊ विश्वविद्यालय मे उपाधि वितरण समारोह के अवसरो पर भाषण दिये। 1948 मे आचार्य जी दिल्ली मे यूनिवर्सिटी कांफ्रेंस में भाषण दिया था। इन भाषणों

शिक्षा को अधिक समाजोपयोगी बनाने का आग्रह किया था। 31 जनवरी 1949 को आचार्य नरेन्द्र देव ने गांधी जी और श्री गणेश शंकर विद्यार्थी के सम्बन्ध में आकाशवाणी से एक महत्वपूर्ण वार्ता प्रसारित की। अपनी इस वार्ता में नरेन्द्र देव जी ने बताया कि गांधी जी अंग्रेजी के बजाय भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाना चाहते थे। लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति रहने के बाद जब आचार्य जी काशी विश्वविद्यालय (बी.एच.यू.) के कुलपति हुए उस समय उन्हें विश्वविद्यालय के करीब-करीब सभी प्रोफेसरों की सदभावना प्राप्त थी। किन्तु बाद में एक-एक कर लोग उनके विरुद्ध होते चले गये। मामला यहाँ तक बढ़ा कि श्री कृष्णदेव प्रसाद गौड़ ने एक ऐसे प्रस्ताव की नोटिस दी जिसका आशय आचार्य जी की क्षमता और न्यायप्रियता पर सन्देह प्रकट करना था। नोटिस में कहा गया था कि "विश्वविद्यालय कोर्ट की दृष्टि में आचार्य नरेन्द्र देव जैसे ख्यातिनामा कुलपति के होते हुए भी गत कई वर्षों से काशी विश्वविद्यालय के कार्य में कोई प्रगति नहीं हो सकी है।जो चक्र जहाँ था वह वहीं है। अतः यह कोर्ट भारत सरकार से अनुरोध करती है कि वह भविष्य में कुलपति के निर्वाचन में इस बात का ध्यान रखे कि कुलपति पूर्ण स्वस्थ, कुशल, न्यायप्रिय तथा ऐसा व्यक्ति हो जो विश्वविद्यालय की व्यवस्था में पूरा समय लगा सके."

उपर्युक्त प्रस्ताव पर अपना विचार प्रकट करते हुए आचार्य जी ने कहा था कि " उक्त प्रस्ताव यह साफ जाहिर करता है कि वे मेरे प्रति अविश्वास का प्रस्ताव पास कराना चाहते हैं और भारत सरकार से प्रार्थना करना चाहते हैं कि भविष्य में जो वाइस चान्सलर हो वह पूर्ण स्वस्थ न्यायप्रिय तथा ऐसा व्यक्ति हो जो विश्वविद्यालय की व्यवस्था में समय लगा सके।" इसके पूर्व ही आचार्य जी ने 11 नवम्बर को त्याग-पत्र दे दिया था। अपने वक्तव्य के बाद आचार्य नरेन्द्र देव कोर्ट की अध्यक्षता का भार प्रो. नारलीकर को सौंप कर चले गये। यूनिवर्सिटी कोर्ट ने उसके बाद 2-4 सदस्यों के बाहर चले जाने पर भी सर्वसम्मति से निम्न प्रस्ताव पारित किया

"कोर्ट की यह मीटिंग आचार्य नरेन्द्र देव जी जैसे ख्यातिनामा वाइसचान्सलर के प्रति अपना आभार प्रकट करती है जिनके कुशल नेतृत्व में इस विश्वविद्यालय ने सभी क्षेत्रों में प्रगति की है और उसके यश की वृद्धि हुई है। अल्प अवधि में ही उन्होंने विश्वविद्यालय की जो सेवा की है वह सर्वथा सराहनीय है और सन्तोषप्रद है। विश्वविद्यालय की आर्थिक सुदृढ़ता निर्धन व पीड़ित छात्रों की सहायता अध्यापकों व कर्मचारियों के मान तथा हितों की रक्षा और शांति व अनुशासन की वृद्धि इसके प्रमाण हैं। अतएव यह कोर्ट आचार्य जी के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करती है और विजिटर से अनुरोध करती है कि वह ऐसी व्यवस्था करें कि जिससे वह विश्वविद्यालय आचार्य नरेन्द्र देव जैसे शिष्ट, न्यायप्रिय जनप्रिय तथा कुशल

कुलपति के नेतृत्व मे अपने उद्देश्यो और आदर्शो की पूर्ति करता रहे।

सितम्बर 1948 मे काशी के कुछ उत्साही साहित्यकारो ने आचार्य नरेन्द्र देव की प्रेरणा से एक नव संस्कृति संघ की स्थापना की। 7 अक्टूबर 1948 को नरेन्द्र देव जी ने उसका उदघाटन किया। 1949 मे आचार्य जी द्वारा मर्गक्षित नव संस्कृति संघ का प्रान्तीय सम्मेलन काशी मे आयोजित हुआ और उसका सभापतित्व बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर डा हजारी प्रसाद द्विवेदी ने किया। मार्च 1950 मे नरेन्द्र देव जी ने काशी नागरी प्रचारिणी सभा की अध्यक्षता का भार सभाला। इस पद पर उन्होने दो वर्ष तक कार्य किया।

नवम्बर 1951 मे नरेन्द्र देव जी लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति थे। उन्होने उत्तर प्रदेश के तत्कालीन शिक्षा मत्री डा सम्पूर्णानन्द तथा विश्वविद्यालय के सस्कृत विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर को अ.सुब्रह्मण्य अय्यर आदि के साथ लखनऊ मे अखिल भारतीय संस्कृत परिषद की स्थापना की। इस सस्था की प्रगति मे आचार्य नरेन्द्र देव की दिलचस्पी बराबर बनी रही। मार्च, 1953 मे काशी नागरी प्राचारिणी सभा की हीरक जयन्ती मनायी गयी। 21 अप्रैल 1954 को आचार्य जी ने बिहार राष्ट्रभाषा परिषद के तृतीय वार्षिकोत्सव का सभापतित्व किया। डा केसकर के अनुरोध पर आचार्य जी ने कई भाषण आकाशवाणी से प्रसारित किये।

आचार्य नरेन्द्र देव की पहली विदेश यात्रा फरवरी, 1950 में एक गैर-सरकारी अन्तर्राष्ट्रीय सस्था के निमत्रण पर हुई। इस सिलसिले मे एक सम्मेलन मे सम्मिलित होने के लिए वह थाईलैण्ड गये। लौटते समय वह कुछ दिन रगून मे ठहरे जहाँ उन्होने बर्मा की परिस्थिति का अध्ययन किया। यात्रा के दौरान उन्होने स्याम मे प्राचीन भारतीय सस्कृति के प्रभाव पर एक लेख तैयार किया। अप्रैल 1952 मे श्रीमती विजयालक्ष्मी पडित के नेतृत्व में भारत सरकार ने एक सद्भावना मण्डल चीन भेजा इसमे आचार्य जी के साथ जाने वाले अन्य प्रमुख लोगो मे एम चलपति राव, अमरनाथ झा फ्रैंक मोरेस भगवन्तम् और श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख आदि थे। ये लोग चीन मे 6 सप्ताह रहे। इस दौरे मे आचार्य जी का स्वास्थ्य कभी कभी बिगड़ जाता था, पर वह जिस कार्यक्रम मे शामिल होते थे उसमे बडे उल्लास से योगदान देते थे। 4 मई, 1952 को नरेन्द्र देव जी ने बीजिंग यूनिवर्सिटी के विद्यार्थियो को 15 मिनट हिन्दी में सम्बोधित किया। 6 मई को नरेन्द्र देव जी ने चीन मे जनता का राष्ट्रीय विश्वविद्यालय देखा। यह विश्वविद्यालय पार्टी के कार्यकर्त्ताओ के प्रशिक्षण के लिए तथा उनके सास्कृतिक स्तर को ऊँचा करने के लिए स्थापित किया गया था।



साहित्य साधना

समाजवादी विचारक, अध्येता, बहुभाषाविद और शिक्षाविद् होने के साथ-साथ आचार्य जी एक सिद्धहस्त रचनाकार भी थे। लेखन के प्रति उनके मन मे किशोरावस्था से ही एक रुझान थी। क्वीन्स कालेज के अपने छात्र -जीवन में आचार्य जी ने उस समय की विख्यात पत्रिका 'विज्ञान' मे पुरातत्व सम्बन्धी कई महत्वपूर्ण लेख लिखे थे। 'मर्यादा' के वर्ष 1913 के नवम्बर अक मे उनका एक लेख छपा था, जिसका शीर्षक था-'हिन्दी के प्रति हमारा कर्तव्य'। उस लेख मे उन्होने हिन्दी के लेखको से हिन्दी भाषा मे मौलिक ग्रन्थ लिखने के अतिरिक्त विभिन्न भाषाओ के उत्तम ग्रन्थो का हिन्दी मे अनुवाद करने का अनुरोध किया था। 'विज्ञान' पत्रिका मे लिखे उनके लेख बहुत ही विद्वत्तापूर्ण थे जिनमें शक संवत्, विक्रम तथा गुप्त वश आदि की पाण्डित्यपूर्ण समीक्षा की गयी है।

नवम्बर 1929 मे ''काशी विद्यापीठ पत्रिका'' के अको में आचार्य जी के दो महत्वपूर्ण लेख छपे इनमे से एक था 'रूस की एशिया सम्बन्धी नीति' तथा दूसरा था, 'ब्रिटिश मजदूर सरकार और भारत'। इसके अतिरिक्त उन्होंने शौकत उस्मानी की पुस्तक ''पेशावर टू मास्को'' का अग्रेजी से हिन्दी में ''पेशावर से मास्को'' शीर्षक से अनुवाद भी कराया। उस्मानी साहब भारत वर्ष मे कम्युनिस्ट आन्दोलन के जन्मदाता माने जाते हैं और वह बीकानेर में सम्पूर्णानन्द जी के छात्र थे तथा सन् 1922 में काशी मे सम्पूर्णानन्द जी के सानिध्य में रह चुके थे।

उनके अध्ययन का दायरा बहुत बड़ा था। हिन्दी, संस्कृत, पालि, उर्दू अंग्रेजी और फ्रेंच के अनेक ग्रन्थों का उन्होंने अनुशीलन और मनन किया था। वाल्मीकीय रामायण आचार्य जी के मानस मे उत्तम काव्य की प्रतिमा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी। महाभारत उनके लिए प्राचीन सस्कृति का जीवन्त तथा प्राचीन आचार-विचार, रीतिनीति, आदर्श तथा संस्थाओ का इतिहास है। उनकी दृष्टि मे वह एक दर्पण के समान है, जिसमें प्रचीन भारत का जीवन प्रतिबिम्बित होता है। उनके मन मे उपनिषद ससार के अलभ्य रत्नो में है। भारत मे जिन विशिष्ट विचारधाराओं ने जन्म लिया है उन सबका मूल उदगम स्थान उपनिषदो मे है। उपनिषदों के आदर्श वाक्यों मे गाम्भीर्य

मानकता और स्वतन्त्र पाया जाता है और वे प्रशस्त पुनीत और उदात्त भावो से पूर्ण है। नरेन्द्र देव जी के मतानुसार उपनिषद वे स्तम्भ है जिन पर प्रतिष्ठित संस्कृत विद्या और भारतीय संस्कृति का दीपक सदा प्रकाश देता रहा है। यही हमारी अचल नीति है, यही हमारा जय-स्तम्भ है।

आचार्य जी की मान्यता है कि साहित्यकार को अपने सामाजिक सरोकारो को सामने रखकर रचना करनी चाहिए। उसे यह नही भूलना चाहिए कि मानव मात्र की एकता और शोषण से मुक्ति प्रगतिशील साहित्य का ध्येय है। इसलिए साहित्यकार को अतीतजीवी न होकर समसामयिकता से जुडना चाहिए, नयी विचारधाराओ तथा नये मूल्यो को अपनाना चाहिए। लेकिन इसके लिए यह आवश्यक नही कि अपनी सास्कृतिक विरासत को पुरानी चीज कह कर छोड दिया जाय। आचार्य जी ने ''नये और पुराने'' के द्वन्द्व के बारे मे कहा- ''नयी व्यवस्था की स्थापना के साथ प्राचीन का सर्वथा लोप नही हो जाता। अर्वाचीन के भीतर भी प्राचीन का बहुत कुछ बना रहता है। नवीन और प्राचीन के मध्य एक नैरन्तर्य एक श्रृंखला, एक परम्परा बनी रहती है। पूजीवाद मे भी बहुत दुर्बल और क्षीण रूप मे सामान्तवाद बहुत दिनों तक वर्तमान रहता है और समाजवाद की स्थापना के साथ भी बहुत दिनो तक पूजीवाद की विशेषताएँ सम्बद्ध रहेगी। विनाश और निर्माण के क्रम मे अतीत वर्तमान और भविष्य के बीच उसको आपस मे जोडने वाली अटूट कडी बनी रहती है। प्रगतिशील साहित्यकार इस ऐतिहासिक सत्य को हृदयगम करते हुए अतीत का सर्वथा परित्याग नही करता है। मनुष्य स्वभावत : परम्परापूजक होता है। जो जाति जितनी ही प्राचीन होती है, उसके भीतर अपनी सस्कृति की श्रेष्ठता की भावना उतनी ही अधिक बद्धमूल होती है। अत भारत जैसे प्राचीन देश मे हमे नवीन सस्कृति के निर्माण की दृष्टि से अतीत के साधक एव समर्थक तत्वो का उपयोग करना ही चाहिए।''

आचार्य जी के जीवन काल मे ही सम्प्रेषण के दूसरे माध्यम भी तेजी से बढने लगे थे और उन्होने साहित्य के प्रभाव-क्षेत्र को घटाने की चेष्टा प्रारम्भ कर दी थी। फिर भी साहित्य की सामर्थ्य के प्रति आचार्य जी का विश्वास अडिग था- ''यह सत्य है कि सिनेमा, रेडियो ओर टेलीविजन ने साहित्य के क्षेत्र मे आक्रमण कर साहित्य के महत्व को घटा दिया है। विज्ञान और टेक्नालॉजी के आधिपत्य ने भी साहित्य की मर्यादा को घटाया है। किन्तु यह असंदिग्ध है कि आज भी साहित्य जो कार्य कर रहा है वह कोई दूसरी मीडिया नही कर सकती।''

एक यशस्वी पत्रकार के रूप में उन्होने 'सघर्ष' का सम्पादन किया जिसकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ अपना ऐतिहासिक महत्व रखती हैं। काशी विद्यापीठ की पत्रिका 'समाज' को वह सहयोग देते रहे। रामवृक्ष बेनीपुरी ने पटना से 'जनता' नामक एक पत्रिका आचार्य जी के दिशा–निर्देशन मे निकाली।

जिन दिनो वह जेल मे बन्द थे उन्होने अभिधर्म कोश का हिन्दी मे अनुवाद किया जो एक चुनौतीपूर्ण रचनाकर्म था। 'बौद्ध धर्म दर्शन ' अपने ढग से अनूठा ग्रथ है । इस ग्रथ पर आचार्य जी को मरणोत्तर साहित्य अकादमी पुरस्कार भी मिला था। उनकी अन्य पुस्तके हैं– राष्ट्रीयता और समाजवाद समाजवाद और राज्यक्रान्ति समाजवादी क्रान्ति और काग्रेस, समाजवाद का बिगुल भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास तथा समाजवाद।

आचार्यजी का लेखकीय अवदान अत्यन्त मूल्यवान है। इन्हे देखने मे आश्चर्य होता है कि उनके जैसा व्यस्त व्यक्ति इतने गभीर और विस्तृत रचनाकर्म के लिए इतना समय कैसे निकाल सका। लेकिन वास्तविकता यह है कि वह और भी बहुत कुछ लिखना चाहते थे जो अपनी राजनैतिक व्यस्तता और स्वाथ्यगत कारणो से नहीं लिख पाये। कदाचित् इसलिए आचार्यजी के निधन पर सम्पूर्णानन्द जी ने उन्हे श्रद्धाजलि देते हुए कहा था—विद्वत्ता बेलिखी रह गयी।



सांस्कृतिक दृष्टि

आचार्य नरेन्द्र के लिए यह चिन्ता का विषय था कि द्वितीय महायुद्ध के बाद जो मानसिक और अध्यात्मिक महामारी फैली उसने उन मानवीय मूल्यो को नष्ट कर दिया जो कि हमारी थाती थे। अतएव अपने समाजवादी चिन्तन और दर्शन को उन्होने विशिष्टता प्रदान की और कहा कि समाजवाद केवल आर्थिक कार्यक्रम ही नहीं एक सास्कृतिक आन्दोलन भी है। उनके मत से, भारत वर्तमान समय मे एक सास्कृतिक सकट के दौर से गुजर रहा है। अतएव इस संकट को दूर करने के लिए सास्कृतिक धरातल पर उन्होने एक सम्यक् और सुव्यवस्थित प्रयास किया। स्वभावत अपने समाजवादी चिन्तन में वह एक ऐसी सस्कृति की कल्पना करते है जिस पर केवल कुछ सुविधा–सम्पन्न लोगो का एकाधिकार नही होगा, वरन् जो प्रत्येक देशवासी को सुखदायी तथा शालीन सास्कृतिक जीवन के साधन सुलभ करेगी।

नरेन्द्र देव जी अपने समाजवादी चिन्तन मे नयी अर्थ व्यवस्था के निर्माण के साथ-साथ वास्तविक मानव संस्कृति के नवोदय पर भी उतना ही जोर देते हैं। उनके द्वारा परिकल्पित समाजवाद का उद्देश्य मनुष्य को आवश्यकता के क्षेत्र से अग्रसर करते हुए उसे स्वतन्त्रता के क्षेत्र तक पहुचाना है। अर्थात्, एक ऐसे समाजवादी समाज की संरचना जिसमें न केवल लोगों की मौलिक आवश्यकताए पूरी होती हैं, वरन् उनके नागरिक स्वत्व या अधिकार भी सुरक्षित हों। इसीलिए वह प्रोफेसर हैराल्ड लास्की के इस मत के समर्थक हैं कि क्रान्तिकारी परिवर्तनो के वर्तमान काल मे कोई भी देश अपनी स्वतन्त्रता को केवल तभी कायम रख सकता है जबकि वह अपनी जीवन शैली मे मूलभूत परिवर्तनो के लिए भी तैयार रहे।

डा. आशा गुप्ता का यह मत उचित ही है कि नरेन्द्र देव की प्रेरणा का स्रोत मार्क्सवादी विचारधारा से समन्वित बौद्ध दर्शन है। बौद्ध दर्शन आध्यात्मिक मूल्यो पर बल देता है और त्याग, शान्ति तथा सबके प्रति करुणा का उपदेश करता है। मार्क्स का दर्शन वास्तविक और भौतिक जगत का पक्षधर है। ये दोनो ही क्रातिकारी आन्दोलन रहे हैं और अपने-अपने समय मे इन दोनो ने ही सामाजिक जडता तथा विकृति के विरुद्ध विद्रोह किया है। दोनो ने ही कष्टों से मुक्ति के लिए मानवता को आशा का सन्देश दिया है। दोनो ही ईश्वर की उपासना से दूर रहे और दोनो ने मानवता की सेवा में स्वयं को अर्पित कर दिया।

आचार्य जी एक ऐसे दार्शनिक थे जो चिन्तन के साथ ही साथ

स्वदेश के लोगों की प्रगति के लिये क्रान्तिकारी सामाजिक कायाकल्प को आवश्यक समझते थे। उनका विश्वास था कि सामाजिक विचारों को प्रगतिशील ढंग से सृजनात्मक कार्य का आधार बनाया जाना चाहिए। उनका राजनीतिक दृष्टिकोण व्यापक तथा उदार था और सामाजिक न्याय के लिए उनके मन में भारी उत्कंठा थी। वस्तुतः नरेन्द्र देव के व्यक्तित्व में सर्जनात्मक चिन्तन, सामाजिक क्रियाशीलता और गहरी संवेदनाओं का अपूर्व समन्वय था।

भारत की सांस्कृतिक विरासत, इसकी धार्मिक मान्यताओं, इसके स्वाधीनता संघर्ष, गांधी जी के नेतृत्व और नेहरू जी की उदारता ने इस देश को मार्क्सवादी अथवा लेनिनवाद के किसी पिटे-पिटाये ढंग के समाजवाद की ओर झुकने से रोका। नरेन्द्र देव जी को इस बात का श्रेय जाता है कि उन्होंने उपयुक्त समय पर देश को मौलिक समाजवादी चिन्तन प्रदान किया तथा उसके लिए कार्य किया।

जैसा कि श्री ब्रह्मानन्द जी द्वारा सम्पादित पुस्तक 'टुअर्डस सोशलिस्ट सोसाइटी' से विदित होता है, नरेन्द्र देव जी की दृष्टि में समाजवाद मात्र आर्थिक या राजनीतिक दर्शन अथवा सत्ता में आने के लिए नारा मात्र नहीं है। उनके मन में समाजवाद एक संस्कृति है, एक सभ्यता है और एक जीवन शैली है। वह समाजवाद को एक नया सामाजिक नीतिशास्त्र, एक नयी शैक्षणिक व्यवस्था और एक नयी प्रेरणादायी विचारधारा मानते हैं।

आचार्य जी का मानना था कि किसी भी सांस्कृतिक ढांचे को अनिवार्य रूप से सामाजिक विकास के साथ-साथ चलना चाहिए। सांस्कृतिक पिछड़ापन सामाजिक विकास के लिए हानिकारक और खतरनाक होता है। उनकी धारणा थी कि समाज का शक्तिशाली वर्ग वह सांस्कृतिक ताना-बाना थोप देता है जो उसके हितों के अनुकूल हो। साथ ही, वह ऐसे सांस्कृतिक ताने-बाने को दृढ़ता से कायम रखता है ताकि वह समाज पर अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक पकड़ सदैव बनाये रख सके। विभिन्न वर्गों के सांस्कृतिक आदर्श भी अलग-अलग होते हैं जिनसे संस्कृति के क्षेत्र में टकराव भी होते हैं। अपने गम्भीर अध्ययन तथा चिन्तन के आधार पर आचार्य जी ने कहा था- "सांस्कृतिक टकराव को सामने देख कर पुरानी सांस्कृतिक व्यवस्था के समर्थक अपने बचाव में आक्रामक हो उठते हैं। बहुसंख्य जनता की रुचि के नाम पर पुरानी व्यवस्था को सही ठहराते हैं और चली आ रही लीक से हटने को ही सामाजिक बुराइयों और सांस्कृतिक उथल-पुथल का कारण बताते हुए उसी लीक पर लौट जाने की वकालत करते हैं। लेकिन सांस्कृतिक वापसी का विचार घातक होता है। इसकी प्रकृति निश्चित रूप से प्रतिक्रियावादी होती है। यह जीवन में ठहराव पैदा करता है, सामाजिक प्रगति के विरुद्ध तूफान खड़ा कर देता है और अंत में सामाजिक गति के दबाव में पड़कर यह टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।"

परिशिष्ट

…olutions that were passed at the meetings of …rker of the United Provinces held at Allahabad …0, 11 and 12, 1933

…his meeting re-affirms that the immediate political objective of our struggle for freedom is complete independence so that India may be freed from the imperialist exploitation of her people and her resources and may be in a position to co-operate as a free nation with ohter progressive nations and people in building up a world order based on national freedom and international co-operation

…n the opinion of this meeting there can be or should be no peace between Indian nationalism and British imperialism, and the struggle for freedom must be continued till independence is achieved. Further this meeting is of opinion that direct action in the form of civil disobedience must be continued as the principal method for enforcing the nation's will and achieving freedom This meeting deprecates all attempts to divert the peoples' attention to other activities involving (a) wakening of the freedom struggle and a partial co-operation with imperialism.

…he proper method of drawing up a Constitution and settling the form of Government for a free India is for a Constituent Assembly, elected on an adult franchise, and fully representative of the people of India, to be convened for the

purpose Such a Constituent Assembly, which can only function when the nation has gained sufficient strength, will also settle the problem of the minorities to the satisfaction of all groups concerned.

(iv) This meeting is also of opinion that political freedom must be accompanied by the social and economic freedom of the exploited masses The meeting notes that some vested interests in India have allied themselves to British imperialism and are opposed to the national struggle for freedom in order to perpetuate their special interests and privileges The meeting is of opinion that the national programme and policy must oppose this alliance and must be based on the transfer of political and economic power to the masses.

II This meeting calls upon the people of the province to carry on the programme of individual civil disobedience so that the struggle might again gather momentum and develop into mass civil disobedience. In furtherance of this struggle Congressmen in different districts should confer together and carry on group activities wherever possible, but it should be borne in mind that even where such group action and direction is not possible, owing to Government interference, individuals have to continue civil disobedience on their own initiative

Such civil disobedience should take the form of work principally in the rural areas where small groups and individuals should work openly to educate, and wherever possible, organize the masses for the furtherance of the Congress programme and should carry on such work in defiance of Government orders meant to restrict such activities Arrests should ordinarily be invited in the course of

the open activities of Congress workers in the rural areas.

The boycott of British goods should in particular be kept in forefront both in towns and rural areas

All workers are to realize that direct action, as indicated above, has to be carried on even though circumstances may make it impossible to issue further instructions

III The meeting expresses its deep admiration for the great sactrifice all those who had carried on the struggle for freedom during the last four years and its sympathy and solidarity with the peasantry, thousands of whom have suffered and are suffering untold hardships. The meeting realizes that the only way to render effective help is to carry on the struggle till freedom is achieved and the burdens on the masses are done away with

IV The meeting is strongly of opinion that Indian mill cloth should not be exhibited or sold in Swadeshi Exhibition and call upon Congressmen not to encourage such mill cloth in any way

V. This meeting of the United Provinces Congress Workers congratulates the 'C' class political prisoners of the province for their untold sufferings in various jails and expresses intense dislike of the classifications of the political prisoners into 'A', 'B' and 'C' classes.

This meeting further urges the Congress workers of the province to refuse their classifications into 'A' or 'B' class.

V N PATHAK,
Asst. to the Dy. Inspr Genl of Police,
Criminal Investigation Department,
General Branch, United Provinces.

परिशिष्ट–2

इसी दिन उन्होने (गाधी जी ने) काशी विद्यापीठ के पदवीदान समारोह मे भाग लिया, जिसका संचालन आचार्य नरेन्द्र देव जी कर रहे थे। गांधी जी कुलपति के रूप में इस समारोह में उपस्थित हुए थे। समारोह के अन्त में उन्होंने कहा-'' मै जानता हूँ कि आपकी लघुसंख्या प्राय: आपको चिन्तित कर देती है और आपके मन में अपनी पुरानी सस्थाओ का त्याग करने के औचित्य के विषय मे शंका भी उठती है। कोई-कोई उन पुरानी संस्थाओं में लौट जाने की प्रच्छन्न इच्छा भी रखते हैं। मै आपसे निवेदन करता हूँ कि प्रत्येक महत कार्य में उसके लिए युद्ध करने वालों की सख्या का महत्व नही होता निर्णायक तत्व सख्या नही वरन् वे योद्धा किन गुणो के आकार होते है यह होता है। ससार के महत्तम पुरुष सदा एकाकी ही रहे है। जरथुस्त्र, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद तथा अन्य अनेक प्रवक्ताओ को अकेले ही खडा होना पडा था किन्तु उनको अपने अन्दर और अपने प्रभु के अन्दर जीवन्त विश्वास था और चूँकि वे समझते थे कि ईश्वर उनके साथ है वे अपने को एकाकी नहीं अनुभव करते थे। जब हजरत मुहम्मद हिजरत में थे, उनके साथ केवल अबूबकर था। शत्रुओ की एक बड़ी तादाद उनका पीछा करते हुए आ रही थी। इसे देख अबूबकर घबडा गया और भय से कापते हुए कहा-''हम सिर्फ दो हैं। इसके विरुद्ध क्या कर लेगे ?'' हजरत ने उसे झिडक कर कहा-''नही अबूबकर ! हम दो नहीं तीन हैं। अल्लाह भी हमारे साथ है।'' विभीषण और प्रह्लाद की अदम्य आस्था को देखो। मै चाहता हूँ, तुममे अपने अन्दर और ईश्वर के अन्दर वही विश्वास, वही जीवन्त आस्था हो।''

गाधी जी का उपरोक्त भाषण श्री रामनाथ सुमन लिखित पुस्तक 'उत्तर प्रदेश मे गांधी' से उद्धृत है जिसके पृष्ठ 133 तथा 134 पर उनके दौरे का कार्यक्रम दिया गया है जिसके अनुसार यह समारोह 26 सितम्बर 1929 को हुआ।

GORAKHPUR

Enquiry Committee Report

We reached Gorakhpur on June 23, and visited Siswa Bazar the next day.

(a) Siswa Bazar affair

There is a village named Khesradi near Siswa Bazar (B N W.R) in the Maharajgunj Tehsil It is in the zamindari of two brothers, Messrs Nawal Kishore Singh and Param Hans Singh. The inhabitants of this village had started a punchayet and had been taking part in Congress activities They represented to the zamindars that they were willing to pay them their legal rent, i.e., the rent entered against their names in the Patwari's papers but not the amount they had been taking from them illegally. It may be noted that while the legal rent was only 2 to 2/8 a *bigha*, the rents actually realized came to about 4/8 or 4/12 per *bigha*. They further said that the *kolhuavan* should be reduced. This *kolhuavan* is of course a wholly illegal or extra-legal demand. The zamindars and the tenants had not been able to come to any terms On May 31, about a hundred men armed with *lathis* and accompanied by seven carts were sent to the village by the zamindars. These men began to loot the houses and beat the people, the first victim of their fury being Rajbali an influential man who had been elected *Sarpanch* by the villagers. The looted property included gram, clothing, ornaments. utensils and cash, in fact, all that the men could lay their hands on—and was brought away in the carts. Six of the men including Rajbali came to

---

गोरखपुर तथा बस्ती जिलों की विस्तृत जांच रिपोर्ट मूलत. हिन्दी में तैयार की गयी थी। रिपोर्ट का सारांश अंग्रेजी में तैयार किया गया था जो यहां दिया जा रहा है

Siswa Bazar as soon as the attack commenced On the advice of their friends, they surrendered themselves to the zamindars, who live in the Bazar itself. They were kept in wrongful confinement for some time and roughly handled and were let go only after each of them had executed pro-notes for Rs. 500 in favour of the zamindars The District Congress authorities took the matter in hands and the Zamindars evidently realized that they had let themselves in for serious consequences as the whole thing had been done in broad day light So a compromise was effected Its main features are (a) a reduction in *kolbuavan,* (b) a remission of 3 *annas* in the *rupee* in the *Rabi* instalment of rent (in the whole amount, not the legal dues—this makes the concession a very poor one), (c) restoration of the looted property which was estimated at about Rs 4,000 and (d) cancellation of the pro-notes. We met B. Param Hans Singh. He admitted the main facts but said that he had sent only 25 men and that taking advantage of the presence of his men, the villagers had looted one another's property, that loot had not been ordered by him and that he had sent the carts, which according to him numbered only five, not to carry away the loot but to bring Rajbali and his five *sarkash* companions. He had no explanation to offer for compelling the men to execute pro-notes.

(b) *Basantpur affairs*

This village is in Maharajganj Tahsil and in the zamindari of Nawab Ali Bashir Khan. Here also there was trouble between the zamindar and the tenants about *ikhfa* (the concealed rent taken over and about the recorded rent). The tenants say that while the legal rent is only 1/8 a *bigha,* the zamindar had been taking 2/4 for some years past and now demands 10 The village was set fire to. Some 25 out of the eighty-two houses were burnt down. There is no direct proof that this was done by the zamindar's orders but the villagers say they caught two men red-handed, but the men were let off

by the police for want of sufficient proof. It may be a mere coincidence but these men are now in the zamindar's service

(c) *Nauna affair*

This village is also in Maharajganj Tahsil and is in the zamindari of B. Udai Narain Singh We saw the house of Jhinnu Tiwari which had been set fire to, it is alleged, by orders of the zamindar. In any case, we saw with our own eyes his field being ploughed by the zamindar's men. He is a Congress volunteer. The zamindar's *sirwar* Bisheshar was present and he told us that he was carrying out his master's orders. Mahesh Chamar told us that his field which was already sown was ploughed up. Motai Ahir told us that he was made to kneel down and *matas*—a large and vicious variety of red ants—were put over his body full one hour. All this was being done simply because the men could not pay their full rent viz , the legal dues plus the *ikhfa*.

(d) *Sadar Tahsil*

Here also the main trouble is over ikhfa. Besides men, we saw here a numebr of women who had been beaten with shoes.

(c) *Bhatni and Gauri Bazar*

The Majhauli Raj is treating its tenants very badly and they have succeeded in terrorizing the people so much that no one from their estate ventured to come before us.

There are serious complaints against Baldewa Mani, Har Prasad Mani and other Brahman zamindars One case deserves special mention The husbands of Marjatia Shirin was so badly beaten that he ran away to Calcutta and died there as a result of the injuries he had received. She took her anohter husband last year This man was also badly beaten and ran away. He has not yet been traced. The woman has two sons The eldest, aged about 16, now began to be victimized

and he too has now run away. She is now left with her younger son aged 10 but this child is also being pressed for *begar* and has already been maltreated more than once if he does not perform the allotted task.

(f) *Rajaura affairs*

Rajaura is a village in Maharajganj Tahsil. The villagers had taken a prominent part in Congress activities and were pressing their zamindars, Messrs. Chuni Lal and Ram Narain Lal, to realize legal dues only A meeting was held at Papri in which besides the tenants Baba Raghava Das was present on behalf of the Congress and B Chuni Lal was also present. It was agreed that the tenants should pay up what they could by the 10th June. On the 7th, some of the tenants started for the market near-by to sell their grain, so as to pay the rents as agreed upon. But they were brought back by the police which took up its quarters at the zamindar's *chhavani*. There was Sub-Inspector, and a Naib two constables and chowkidars The two zamindars were also there with their men. Ostensibly the police had come to make enquiries about an assault which B. Ram Narain Lal, one of the zamindars, alleged had been made upon him by some of the villagers. The houses were entered into by the zamindar's men and the villagers were brought to the *chhavani*. There the police let off every one on the security of two persons each except Ganga, who was a Congress volunteer and apparently, an influential and outspoken man. What transpired next it is difficult to say. But this much is certain that at some stage or other there was a scuffle between the zamindar's men and the villagers as a result of which one of the former was hurt and that Ganga was shot dead. The post-mortem examination by the Sub-Inspector showed that he had received three bullet wounds.

More than 100 tenants are being presented for noting

Armed police was then posted in the village, which was

deserted by most of the men who took shelter in the adjoining forest The women were left to take care of the houses. The women alleged that during the ten days that the police was there, many members of the police force together with the village chowkidar who has all along been the evil genius of the place took away forcibly a number of things, specially grain in large quantities

General

The general complaints in Gorakhpur are :—

(i) almost every zamindar demands *ikhfa* (concealed rent);
(ii) other illegal dues, e.g., *kolhuavan* are demanded and tenants are asked to sell their produce, i e., grain, *ghi*, and oil to the zamindar at prices far below the market rates;
(iii) in most cases, no receipts are granted,
(iv) much severity is practised in the realization of these legal and illegal dues, even women and children not being spared

BASTI

Enquiry Committee Report

On June 25, we were taken to Mehdawal, a *Qasba* in Khalilabad Tehsil of the Basti District. There is practically no agrarian trouble in this district. After the Gandhi-Irwin settlement the local Congress workers decided to select a small area for carrying on intensive congress work. Mehdawal was selected for this purpose and a batch of Congress volunteers was posted in the bazar. They started peaceful picketing of foreign cloth in the bazar There are about 20

cloth-shops. The merchants agreed to get the stock of foreign cloth sealed They also purchased national flags and hoisted them on their shops. The Congress people gradually enlarged the field of their activities Their success soon attracted notice of the authorities who were disturbed by the news and who decided to take all possible steps to stop their activities They put pressure on the zamindar of the bazar to ask the owner of the house which was in the occupation of the Congress volunteers to get it vacated It was with much difficulty that the Congress people could get lodgings in the bazar The *sarkhat* of the house was however executed in the name of a third party to avoid trouble.

The owner of the house resides in Cawnpore but his *munim*, Jagannath Shukla, lives in the bazar and looks after his master's property and business The *munim* locked the house in the occupation of the Congress volunteers one day at the instance of the zamindar when the volunteers had gone to a neighbouting village for propaganda. Since then they have been living on the small *chabutra* outside Pandit Raja Ram Sharma who is in charge of the Congress volunteers told us that their belongings in the house had been stealthily removed by the zamindar during their absence We examined Jagannath Shukla and his brother Jwala Prasad The *munim* told us that personally he had absolutely no objection to the occupation of the house by the Congress people He, however, expressed his helplessness as he said he did not dare to go against the wishes of the zamindar and the local authorities His brother Jwala Prasad told us that he had been called by the S D.O. who asked him to get the house vacated. A Congress volunteer, Ganeshi Bhagat, deposed before us that the S.I. of the Mehdawal police station one day told him to vacate the house and administered a threat to the effect that if the house was not vacated they would be belaboured by

badmashes as was done in Bansi last year

One day the S D O. of the Tehsil visited the bazar He took down names of the cloth-merchants and asked them to see him in the Dak Bungalow where he was putting up When the merchants assembled in the Dak Bungalow they were told by the S D O. to remove the flags from their shops He told them that he had no objection to their selling swadeshi cloth but he could not allow them to hoist national flags. The poor merchants were cowed down and they removed the flags from their shops.

We examined two of the cloth-merchants, viz. Ram Harakh and Hira, besides Pandit Raja Ram Sharma and a few other Congress volunteers. The other cloth-merchants of the bazar did not agree to appear before us for fear of incurring displeasure of the authorities The cloth-merchants corroborated the story narrated by Raja Ram Sharma They told us that the picketting was perfectly peaceful and that they of their own accord agreed to get sealed their stocks of foreign cloth to save themselves much pecuniary loss. They also admitted that they hoisted national flags on their shops The story of the S D.O having visited the bazar one day and having ordered them to remove the flags is fully borne out by their statement

Some tenants of a neighbouring village, Gagnai Babu made complaints to us against their zamindar, Jagannath Singh. He did not relish the idea of their joining the Congress and participating in Congress activities. He, in order to coerce them, made a false accusation of arson against them but as no proof was forthcoming no action was taken. Some of them are now being prosecuted under section 107 Criminal

Procedure Code on the alleged ground that they were dissuading tenants from paying rents.

After considering all the evidence produced before us we have absolutely no doubt that the S D.O. got the flags removed from the shops and was instrumental in depriving the Congress volunteers of the use and occupation of the house This is clearly a breach of the terms of Gandhi-Irwin settlement.



31. The *Citizen* (Allahabad), of the 14th January

Mr Bal Gangadhar Tilak at Allahabad

remarks as follows on Mr. Tilak's lecture on our present situation :— On Monday (7th of January 1907) at 4.30 p.m. in the compound of Mr. Govind Prasad's bungalow, Mr. Bal Gangadhar Tilak, who, on his way back from Calcutta stopped in Daraganj for the benefit of his health, and to have in the auspicious *Magh* season a dip in the *Tribeni*, at the request of a number of College student delivered a discourse on "Our Present Situation." The assembly was large enough though mainly composed of young men. Partly owing to the untimely hour at which the meeting was convened, and partly because of the well-known, extreme views of the democratic leader, most men who usually attend political meetings at Allahabad kept themselves away. The speech lasted for more than two hours and being interspersed throughout with wit, humour and anecdotes, did not in the lease tax the patience of the audience. We are of course not in a position to say that we agree with the learned speaker in all that he said, but in justice to him we must observe that we listened to his unsophisticated eloquence simply spell-bound. *(sic.)*

Mr. Tilak pointed out in the course of his lecture that in India the interests of the people and Government were not identical, and it was no wonder if the authoritie represented politics to the student as the forbidden fruit. Anyhow he did not want students to take part in politics at the expense of their study. In his opinion politics and industrial questions could not be dissociated, so long as the attitude of the British Government continued what it was. He then pointed out that the questions regarding the simultaneous Civil Service

Examinations the separation of judicial and executive functions, the expansion of representation in the Councils, and various other wholesome measures remained altogether unheeded though the Indian people had been crying for them for the past fifty years He then said that after a careful consideration of all the ills and sufferings of their countrymen, the Indian leaders had come to the conclusion that their salvation simply lay in self-government He remarked that it was high time for them to organize all their forces of opposition, *swadeshism* or *boycott* being the chief of them At the Congress it had been given out that in Madras and the United Provinces people did not want the boycott movement. (Here a loud cry was raised from all parts of the meeting declaring that the statement was false and they were all in favour of boycott). The Anglo-Indian bureaucracy knew that the educated class was harmless, and however discontented it might be it would continue harmless It was this conviction that led it to ignore their grievances. It was true that Anglo-Indians evinced a sympathy for certain backward classes It was because they wanted to see all brought to a dead level He concluded with the hope that in all that youngmen said or did they might always be able to exercise discretion and not prove the tool of others.

Mr Tilak at Allahabad

The *Advocate* (Lucknow), of the 17th January, makes the following quotation from Mr. Tilak's lecture delivered at Allahabad on our present situation while on his way to Poona from the Indian National congress :—"If I had given absolute self-government as the goal of our efforts, they would have said 'Mr. Tilak is a fire-brand'. Had Bipin Babu given it as our goal, they would have said 'Oh! he is an Extremist'. Now that Dadabhai has given it, it will not be questioned. I predicted what Dadabhai would say a month ago in my paper. *Swadeshi* is the first step, boycott is the

means, and *Swaraj* is the end —B.G. Tilak

The Provincial conference in the United Provinces

A correspondent in the *Advocate* (Lucknow), of the 18th January, says that it is understood that the United Provinces are going to hold their first Provincial Conference this year during the Easter holidays, but is afraid that the news is too good to be true



परिशिष्ट-5

The first session of the A.I C C., after the attainment of India's freedom which commenced on November 15, ended on the 17th (1947) On the very first day in the presence of Gandhi, President Kripalani told the A.I C.C. that he was resigning his position. He had neither been consulted by the governmnet, nor had been taken into their full confidence. He said that the Government ignored the Congress party He revealed that Gandhi felt that in these circumstances, the resignation was justified.

Nehru and Patel were the heads of the Government. Their hold on the Congress machine was unqustioned. They identified themselves with the party. Why then should they accept the Congress President as a curb on their power?

Gandhi attended the Working Committee meeting, which was to elect the new president He was for Narendra Deva Nehru supported Narendra Deva's candidature Other members opposed it.

महात्मा लाइफ आफ मोहनदास करमचंद गाधी, खण्ड- 8 (1947-48): अध्याय- स्टीप सेण्टर पृष्ठ 191 लेखक- जी डी.तेण्डुलकर।